श्रीः ।

द्रौपदीवस्त्र हरण ।

अर्थात्

पांडव वनगमन नाटक ।

राय प्रभुलाल कायस्थ अष्ठाना आगरापुर
निवासीने बनाया.

मुम्बई
खेमराज श्रीकृष्णदासके
श्रीवेंकटेश्वर छापाखाना में
छपाकर प्रसिद्ध किया ।

श्रावण कृष्ण संवत १९५३

भूमिका।

मुझे कई वर्षों से भारतवर्षीय प्राचीन ग्रंथोंके पढ़ने का बहुत अभ्यास रहा है विशेष करके महाभारत और रामायण के पढ़ने का जिन ग्रन्थों को मैंने हिन्दी भाषामें बहुत प्रसन्नता-पूर्वक पढ़ा है और जो जो अनेक धर्म्मों और ज्ञान की बातों का वर्णन इन ग्रन्थों में हुआहै उससे मैंने बहुत लाभ उठाया है थोड़ा काल हुआ कि "श्रीवेङ्कटेश्वर" छापेखानेमें छपा हुआ पण्डित ज्वालाप्रसादजीका हिन्दी भाषा में रचा हुआ "वेणी-संहार नाटक" मेरे देखने में आया इस नाटकको पढ़कर मेरी यह इच्छा हुई कि पांडवोंकी जिन प्रतिज्ञाओंके पूर्ण होनेका वृत्तान्त नारायणभट्ट कविने अपने इस नाटकके द्वारा वर्णन किया है उन प्रतिज्ञाओं के होने के समयका वृत्तान्त भी नाटकही के रूपमें लिखा जाय जिससे स्वदेशीयजनोंको यह लाभहोगा कि यदि वह पहिले इस नाटकको पढ़ेंगे और फिर वेणीसंहार नाटकको देखेंगे तो उनको सारी कथा महाभारतसे भारी ग्रन्थको देखने का परिश्रम किये विना सरलताके साथ मालूम होजायगी यद्यपि इन दोनों नाटकोंके पात्र एकही हैं तदपि दोनोंमें बड़ा अन्तर यह है कि जब कि वेणीसंहार बीर-रससे भराहुआ है यह नाटक करुणारससे पूरित है और द्रौपदी के मुख्य पात्र अथवा नायका होनेके कारण और इस विचारसे कि पांचवें अंकमें पांडवों के वनगमनका वर्णन हुआ है मैंने इस नाटकका नाम "द्रौपदीवस्त्रहरण वा पांडव-वनगमन" रक्खा है मैंने इस नाटकको ऐसी सरल हिन्दी-

भाषामें लिखा है कि यदि इस नाटक के खेलने का कोई विचार करे तो इसकी भाषा सबके समझ में आवै यद्यपि यह नाटक प्राचीन संस्कृत नाटकोंकी रीतिपर लिखा गया है परन्तु अंग्रेजी नाटकों के ढंगपर सीन्स अथवा परदे जुदा जुदा कर दिये गये हैं

हिन्दी महाभारतों से जो मुंशीनवलकिशोर के छापेखाने में छपकर प्रसिद्ध हुई हैं मुझे बड़ी सहायता मिली है विशेष करकै सबलसिंह चौहानकी महाभारतसे जो कुछ ऊपर दोसौ वर्ष हुए गोस्वामी तुलसीदासकृत रामायण के ढंगपर रची गईथी पहिले अंकके पहिले गर्भाङ्क का आश्रय मैंने इन्हीं महात्माकी महाभारतसे लिया है जिसको मैंने अपनी कल्पनासे बढ़ा दिया है इसको छोड़कर मैंने कोई ऐसी कल्पना नहीं की है जो महामुनि श्रीव्यासकृत महाभारतके विरुद्ध हो।

मैं कोई कवि नहीं हूं और न कवियों के चरणोदक के तुल्य हूं इससे महात्माओं के रचे हुए ग्रंथोंके साथ यह मेरा ग्रंथ रखने के योग्य नहीं है मैंने हिन्दी भाषामें यह नाटक पहिलेही पहल लिखा है इससे यह आशा है कि, इसमें जो कोई दूषण पाये जावें उनको सकल सुहृद्जन कृपाकरके क्षमाकी दृष्टिसे देखें॥

स्थान हैदराबाद दक्षिण
मि॰ वैशाख वद्य ९
सं॰ १९५६

प्रभुलाल
कायस्थ अष्ठाना
आगरापुरनिवासी.

महाभारतका संक्षेप वृत्तान्त।

चन्द्रवंशी राजाओं में जिनकी राजधानी हस्तिनापुर थी पुरुके वंशमें दुष्यन्त भरत कुरु प्रतीप शान्तनु आदि बड़े बड़े जगत् प्रसिद्ध राजा हुए हैं शान्तनुके पुत्र भीष्मजी हुए जिन्होंने अपने पिताका हित करनेको अपना विवाह न करने और राज्य को त्यागने की घोर प्रतिज्ञा की थी जिस प्रतिज्ञा को उन्होंने यथोचित पूरा किया राजा शान्तनु को सत्यवती के उदरसे चित्राङ्गद और विचित्रवीर्य नाम दो पुत्र हुये विचित्र-वीर्यके तीन क्षेत्रज पुत्र हुये धृतराष्ट्र पाण्डु और विदुर जिनमें से विदुरने दासीके गर्भमें जन्म लिया था धृतराष्ट्रको अंधा होने के कारण राज्य न मिलने से पाण्डुराजा हुये पांडुके दो रानियां थीं कुन्ती से युधिष्ठिर भीमसेन और अर्जुन और माद्रीसे सहदेव और नकुल उत्पन्न हुए धृतराष्ट्र के सौ पुत्र दुर्योधन दुःशासन विकर्ण आदि रानी गांधारी से हुए राजा पां-डुके मरणान्तर उनके पांचों पुत्र जो उस समय एक वनमें रहते थे हस्तिनापुर को आये और धृतराष्ट्र के आश्रित होकर रहने लगे यहां वह अपने चचेरे भाइयों के साथ वेद और धनुर्विद्या में निपुण हुये जो विद्या उन्होंने द्रोणाचार्य से सीखी पांडु के पुत्र पांडवके नामसे और धृतराष्ट्र के पुत्र कौरव के नाम से विख्यात हुए बाल अवस्थाही में कौरवों और पांडवों में विरोध रहने लगा और पांडवोंको कौरवोंके हाथ से नानाप्रकारके कष्ट पहुँचे कर्ण जो कुन्ती का पुत्र सूर्य से था जिसको कुन्तीके त्यागने पर अध-रथ सूत की स्त्री राधाने पालाथा कौरवों के साथ मिलकर पांडवों से बड़ा वैर रखने लगा दुर्योधन कर्ण और शकुनी ने जो दुर्योधन

का मामा था पांडवों के नाश के अनेक उपाय किये और एक समय वार्णावत नगर में लाख के बने हुए एक घर में पांचों भाइयों को बसाकर उनको जला देनेका उपाय किया परन्तु विदुरकी सहायता से पांचों भाई उस घरको आपही जलाकर अपनी माता कुन्ती के साथ बचकर भाग गये और वन में बहुत दिनोंतक अनेक प्रकारके क्लेश सहकर राजा द्रुपदके नगरमें पहुँचे जहां अर्जुनने स्वयंवरयज्ञ में द्रौपदी को जीता और उस का विवाह पांचों भाइयों के साथ हुआ इसके अनन्तर धृतराष्ट्र ने विदुर को भेजकर उन्हें हस्तिनापुर बुलवा भेजा और युधिष्ठिर को आधा राज्य देकर भाइयों और परिवारके साथ इन्द्रप्रस्थ को विदा किया जहां मयदानवने पांडवोंके लिये एक अद्भुत सभा रची तदनन्तर युधिष्ठिरने राजसूय यज्ञ के करने का विचार किया उसके भाइयों ने दिग्विजय करके पृथ्वीके सब राजाओं से धन रत्न हाथी घोड़े आदि की भेटें लीं और उनको यज्ञ में आनेके लिये निमंत्रण दिया जब सब राजा इकट्ठे होगये तो यज्ञ का आरंभ हुआ भगवान् श्रीकृष्णजी आप इस यज्ञ में विद्यमान थे उन्होंने चंदेरी के राजा शिशुपालको जिसने उनकी बहुत बड़ी निन्दा की थी वधकर युधिष्ठिर का अभिषेक बडे बडे ऋषियों और मुनियों के साथ किया और राजा युधिष्ठिर को साम्राज पद प्राप्त हुआ इसके अनंतर जो कथा है वह इस नाटकसे विदित होगी ।

पांडवों ने वन जानेके उपरान्त तेरह वर्ष विपिन पर्वतों और तीर्थोंमें बिताये और बडे बड़े ऋषियोंसे अनेक धर्मोंकी कथायें सुनीं चौदहवां वर्ष विराटनगर में गुप्त बिताया जब

चौदहवां वर्ष समाप्त होगया तो नियम के अनुसार उन्हों ने कौरवों से अपना राज्य माँगा परन्तु दुर्योधन ने नहीं दिया इसी कारण दोनों ओरसे अठारह अक्षोहिणी सेना का समागम होकर अठारह दिन तक भारी संग्राम हुआ जिसमें सब कौरवों का नाश हुआ और पांचों पांडवों को छोड़कर पांडवों के पक्षपाती जनभी सब मारेगये इस संग्रामकी कथा वेणीसंहार नाटक से विदित होगी।

इति।

नाटकपात्रों के नाम।

पुरुषाः।

श्रीकृष्ण	यदुनाथ ईश्वरावतार (अन्तरिक्षप्रवेश)
युधिष्ठिर	इन्द्रप्रस्थका राजा पांडवों में सबसे बड़ा भाई
भीमसेन, अर्जुन, नकुल, सहदेव	पांडव युधिष्ठिर के छोटे भाई
दुर्योधन	हस्तिनापुरका राजा कौरवों में सबसे बड़ा भाई
दुःशासन, विकर्ण	दुर्योधन के छोटे भाई
धृतराष्ट्र	कौरवोंके पिता और पांडवों के ताऊ (चचा)
भीष्म	कौरवों और पांडवों के पितामह
विदुर	धृतराष्ट्र का छोटा भाई और मंत्री
शकुनी	गांधार का राजा दुर्योधन का मामा
कर्ण	सूर्यपुत्र अंगदेश का राजा
व्यास	महर्षि
द्रोणाचार्य	कौरवों और पांडवों के गुरु
इन्द्रसेन	युधिष्ठिर का सारथी
संजय	धृतराष्ट्र का सारथी
प्रातिकामी	दुर्योधन का सारथीपुत्र
गंधर्व	
बूढ़ा कंचुकी	
प्रतिहारी	
द्वारपाल	

स्त्रियाः।

द्रौपदी	युधिष्ठिर की रानी पांडवों की भार्य्या
भानुमती	दुर्योधन की रानी
गांधारी	धृतराष्ट्र की रानी कौरवों की माता
कुन्ती	पांडवों की माता
दुःशला	दुर्योधन की भगिनी
मनोज मंजरी मदन मोहिनी	द्रौपदी की सखियां
उर्वशी रम्भा	दो अप्सराऐं
बुद्धिमती	द्रौपदी की दासी
एकदासी	
संयोगस्थल	इन्द्रप्रस्थ (हस्तिनापुर)

अथ

द्रौपदीवस्त्रहरण।

अर्थात

पांडव वनगमन नाटककी—

प्रस्तावना।

(नान्दी रंगभूमिमें मंगलाचरण करता हुआ आया।

चौपाई।

आदि सनातन अरु अविनाशी। सदा निरंतर घट घट वासी॥
पूरणब्रह्म पुराण बखानै। नारद शारद अन्त न जानै॥
एक निरंतर ध्यावें ज्ञानी। पुरुष पुरातन है निर्बानी॥
लोचन श्रवण न रसना नाशा। बिन पद पानि करै परकाशा॥
रूप रंग अरु अंग न धारै। मुनि मनसा में कहा विचारै॥
जरा मरण ते रहित अमाया। मातु पिता सुत बंधु न जाया॥
जाकी माया लखै न कोई। निर्गुण सगुण धरै वपु दोई॥
केशव रूप सगुण है धारा। त्राहि त्राहि द्रौपदी पुकारा॥
सुनि कै टेर भक्तकी धाये। तुर्तहिं लज्जा राखन आये॥
सोई कृष्ण महाहितकारी। रक्षा करहैं सदा तुम्हारी॥

दोहा—पांडु बधू पट हीन की, पत राखी कर्त्तार॥
सोई करुणानिधि हरी, रक्षा करैं तुम्हार॥

(सूत्रधार आता है)

सूत्र०—अब बस करो (चारों तरफ देखकर) हैं यह क्या आज तो एक अद्भुत नाटक का खेल रचा जायगा, परन्तु नटोंने अब तक कोई तैयारी नहीं की और न वह इस समय यहां हैं॥

(एक नट आता है)

नट०—क्या आज्ञा है महाराज॥

सूत्र०—आज्ञा क्या है तुम को खबर नहीं आज रातको राय प्रभुलाल विरचित द्रौपदीवस्त्रहरण वा पांडववनगमन नाम नाटकका खेल होगा सो तुम अब बाजा बजाओ और गानेका आरंभ करो जिसको सुनकर ये सब सभासद लोग प्रसन्न हों॥

(नेपथ्यमें)

हे बन्दीजनो! हे नटो! तुम अपने अपने बाजे बजाकर भगवान् श्रीकृष्णजीके यशोंके गानेका आरंभ करो, संसार की उत्पत्ति पालन और लय करनेवाले भरतकुलके हितकारी भगवान् पद्मपाणि देवकीनन्दन जिनकी कोपाग्नि शिशुपालका वध करनेसे भड़क रही है और अभीतक शान्त नहीं हुई है,—व्यास, नारद, देवल, असित, परशुरामादि बड़े बड़े ऋषियोंके साथ महाराज युधिष्ठिरका अभिषेक करने की इच्छासे अपने आसनसे उठ रहे हैं॥

सूत्र०—(सुनकर) अहा यह तो मेरे ही समान नटोंको बाजा बजाने और गानेका आरंभ करनेको कोई कह रहा है.

(नैपथ्यमें बाजा बाजता है और नीचेलिखा गाना होता है)

चौपाई।

जय जय जय श्रीकृष्ण मुरारी। अगम अगोचर लीला धारी॥
जय अघारि जय जय अविकारी। जय जय जय केशी कंसारी॥
जय शारँगधर जय असुरारी। जय मनमोहन कुंजविहारी॥
जय जय जय वृन्दावन वासी। लक्ष्मीपति वैकुंठनिवासी॥

तुम कपीश सुग्रीव उबारा । राखि बिभीषण रावण मारा ॥
ध्रुवहि निरादर किय पितु माता। ताकहँ नाथ भयो तुमत्राता॥
बड़भागी ये सब कुरुनन्दन । कीन्ह कृपा जो तुमयदुनन्दन॥
धर्मराजको दीन्ह बड़ाई । साम्राजपद दियो सुहाई ॥

सूत्र०-(सुनकर) अहा यह तो कहीं बाजे बज रहे हैं और भगवान् श्रीकृष्णजीका कीर्त्तन हो रहा है, परन्तु हे नटो! तुमने यहां अभीतक गाने बजाने और खेल का आरंभ नहीं किया है ॥

नट०-बहुत अच्छा महाराज! जो आपकी इच्छा हो तो मैं भी कुछ गाऊं कौनसे समयका आश्रय लेकर गाऊं?

सूत्र०-यह वसंतागमनका समय है इससे तुम ऋतुराजका आश्रय लेकर कोई गाना गाओ ॥

नट०-अच्छा मैं वसंत ऋतुकाही गाना गाताहूं आप सुनिये॥

कवित्त।

वायु बुहारि बुहारि रहे क्षिति बीथी सुगंधन जाती सिंचाई।
त्यों मधुमाते मलिन्द सबै जयके करखान रहे कछु गाई॥
मंगलपाठ पढ़ैं द्विजदेव सबै विधि सो सुखमा उपजाई।
साजि रहे सब साज घने बनमें ऋतुराजकी जानि अवाई॥

सूत्र०-धन्य है! धन्य है!! तुमने बहुत अच्छा गीत समयके अनुसार गाया और तुमने अपने इस गीतको उस भजनके साथ जो अभी हमने सुनाथा क्या अच्छा मिलाया है अब तुम शीघ्र खेलका आरंभ करो ॥

नट०-जो आज्ञा अभी करताहूं॥ (बाहर जाता है)

(नेपथ्यमें)

हा पापी दुरात्मन् कुरुकुलनीच ! तूने जो विचार हमारे यज्ञमें विघ्न डालनेके कियेथे वह मुझसे छुपे नही हैं अरे ! तू बड़ा अशुभचिन्तक और विश्वासघाती है तेरा हृदय बड़ा कुटिल है, हे सहदेव ! महाराजका अभिषेक तौ होचुका इधर आओ मैं तुमसे कुछ बात करूंगा ॥

सूत्र०–(सुनकर और नैपथ्यकी ओर देखकर) अरे क्या यह क्रोधका भरा हुआ भीमसेन सहदेवके साथ इधर आरहा है अब इसके आगे ठैरना ठीक नहीं है, इसलिये यहांसे चल देना चाहिये ॥

(जाता है)

इति प्रस्तावना–

पहिला अंक।

पहला गर्भांक।

स्थान—इन्द्रप्रस्थ यज्ञशालाके बाहर।

(भीमसेन और सहदेवका प्रवेश)

भीम०—हा पापी दुरात्मन् कुरुकुलनीच ! (इत्यादिक बोलता हुआ)

सह०—हे आर्य ! इस समय आपके सुयोधनपर क्रोधित होनेका क्या कारण है? आप मुझे यहां ऐसे समयपर जब कि महाराज यज्ञमें दीक्षित हो रहे हैं क्यों बुलाकर लाये हैं॥

भीम०—हे भाई ! तुम्हें किसीको मालूम नहीं है कि, इस हमारे सदाके बैरीने हमारे यज्ञमें विघ्न डालनेको क्या करना चाहाथा मुझे तुमसे उसके कहनेकी बड़ी आतुरता हो रही है॥

सह०—नहीं भाई मैं कुछ नहीं जानता हूँ मैं तो महाराजके समीप वर्त्तमान था और यज्ञकी सब सामग्री पहुँचाताथा।

भीम०—बस इसीसे तुम कहते हो कि मैं बहुत दूरदर्शी हूँ और सब बातकी खबर रखता हूँ अब मैं तुमसे सब गुप्त हाल कहता हूँ यह तो तुम जानते हो कि महा-

राजने मेरे वचनको न मानकर दुर्योधनको कोशाध्यक्ष बनाया था ॥

सह०—हां यह तौ मैं जानता हूँ ॥

भीम०—बस जब सब धन और रत्न और द्रव्य जो यज्ञके लिये इकट्ठा हुआ था उसके हाथ आगया तौ उसने कर्ण और शकुनी इत्यादिक की सम्मतिसे इस सब धनको लुटा देनेका विचार किया और ब्राह्मणोंको दान देनेके मिससे कर्णने असंख्य धन दुर्योधनसे मँगालिया उसने यह विचार किया था कि, जब सब धन इस विधिसे खर्च हो जायगा तौ यज्ञके समय ब्राह्मणोंको दान देने को कुछ न रहैगा और जब ब्राह्मणों को दान न मिलैगा तौ बहुत बड़ी बात अपयशकी होगी और यज्ञ निष्फल हो जायगा। परन्तु हमारे सदाके उपकारी भगवान् यदुनन्दनने उसके इस अशुभ विचारको पूर्ण न होने दिया वह अपनी दयालुतासे कोशको जैसे जैसे वह खाली होता गया भरते गये ॥

सह०—उन भगवान्‌ने हमारी बड़ी लज्जा रक्खी क्यों न हो वह ऐसेही हमपर दयालु हैं ॥

भीम०—और सुनो जिस समय भगवान्‌ने शिशुपालको वधा जो सबतरह वधके योग्यथा वह अभिमानी नीतिका विचार करकै हम सबों के पितामह भीष्मजीसे यों बोला उसके यह वचन मैंने अपने कानों सुने हैं—

चौपाई

उचित न मखमंडल महँ ऐसी। भई पितामह बात अनैसी॥
मखहित प्रथम निमन्त्रण दीन्हा। भवन बुलाइ तासु वधकीन्हा॥
यज्ञादिक कारज यश हेतू। अपयश पूरि भयो भरि खेतू॥
तात यत्न कीजै अब सोई। अपयशभंग जौन विधि होई॥
करिय साज सजि समर बहोरी। जेहि संसारधरै नाहिं खोरी॥
सम्मुख समर यदुन सन लीजै। जियत न जान द्वारकादीजै॥
नतु महिहीन होइ यदुवंशी। की जग रहैं न कुरुकुलवंशी॥

सह०—यह पापिष्ट सुयोधन श्रीकृष्णभगवान्‌कोभी नहीं जानता है जो उसने उनके साथभी संग्राम करनेका विचार किया फिर क्या हुआ?

भीम०—उस मूढ़ के उकसानेपर उसके पक्षके सकल कुरुवंशी और दूसरे राजा कर्ण, शकुनी इत्यादिक धनुष और कवचके साथ सजिकर लड़नेको तत्पर होगये और घोरसंग्राम यदु और कुरुवंशियोंमें मचनेहीको था जो हमारे पितामह उसको रोक न देते॥

सह०—हमारे पितामह जो सदा हमारी भलाई चाहते हैं उस अभिमानीको कैसे रोका?

भीम०—जब पितामहने यह देखा कि घोर उपद्रव होने वाला है जिससे किया कराया काम सब विध्वंस हो जायगा तो वह तुरन्त दुर्योधनको हटककर यों बोले—

चौपाई।

तात समुझि परिहरहु कुमतिही। सोह न समरतुम्हैं यदुपतिही॥
चलिहि न बिक्रम साहित सहाई। नाहक प्राण गँवैहौ जाई॥
चलिहि चक्र हल मूशल नाना। हरिहलधर करिहैं घमसाना॥

सह०–पितामह के यह वचन सुनकर फिर दुर्योधनने क्या किया ?

भीम०–तब तो उसके कान खड़े हुए और अपनासा मुहँ लेकर चुप हो रहा और उसके चुप हो जाने पर दूसरे सब राजाओंने भी कवच और धनुष उतार कर रख दिये॥

सह०–बहुत बड़ी कुशल हुई॥

भीम०–हे सहदेव! मेरी आँखें और मेरे कान खुले हुएथे मुझे तो इस दुर्योधनका पहिलेहीसे विश्वास न था मैं जानता था वह अवश्य विघ्न डालना चाहैगा सोई उसने किया, हे भाई! जब मैंने उसके अभिप्रायोंको जाना तभी मैंने उसको उसी समय यथोचित दंड देनेका विचार कियाथा परन्तु महाराजके डरसे मैं अपने क्रोधको अबतक रोके रहा हूं॥

सह०–आपने बहुत ठीक किया कदाचित् आप उसको कोई दंड देते तो बड़ी भारी अपयश की बात होती एक तो वह हमारा भाई है दूसरे वह हमारी यज्ञमें निमंत्रित होनेके कारण अब हमारा पाहुना है पाहुने को दंड देना अथवा बधना कदापि उचित नहीं है॥

भीम०–फिर भगवान् ने शिशुपाल को कैसे मारा? वह भी तो हमारा पाहुनाथा॥

सह०–सच है, परन्तु वह खल बधनेहीके योग्य था, क्योंकि उसने भगवान् श्रीकृष्णजीकी भारी निन्दा की जो किसी अवस्थामेंभी क्षमाके योग्य नहीं है॥

भीम०–हे सहदेव! तुमने अभी क्या कहा था वह दुर्योधन हमारा भाई है? हां, हाथकी लकीरें तो नहीं मिट सकतीं

परन्तु सोचो तो क्या कोई ऐसा भाई होता है जिसके ऐसे २ कर्म हैं॥

दोहा–विष खवाय डारयो हमें, सुरसरि धारा बीच॥
जतुगृह मांह बसायकै, जारन चाह्यो नीच॥

सह०–यह तो आपने सच कहा, परन्तु सज्जन मनुष्यों में सदा क्षमा रहती है, जो संत होते वह अपनी आत्माकी समान दूसरोंका भला चाहते हैं॥

भीम०–क्षमा एक अपराधकी होती है दोकी तीनकी चार की होती है,प्रत्येक अपराध की क्षमा नहीं होतीहै क्षमाकाभी अंत है,माना हमने,हम उसके व्यतीत अपराधोंको क्षमा करदें पर क्या तुम कह सकते हो वह फिर कोई अपराध हमारे साथ न करैगा? नहीं नहीं सहदेव मैं फिर कहता हूं तुम अच्छी तरह स्मरण कर रक्खो वह दुष्ट फिर हमारे नाश करनेके उपाय सोचैगा और हमैं घोर विपत्तिमें डालनेके अवश्य यत्न करैगा क्योंकि उसे हमारे इस वैभवको देखकर बड़ी जलन हुई है यदि दुर्योधनको वधनेकी आज्ञा महाराज मुझे न देंगे तो जानलो वह हम सबको कभी चैनसे न रहने देगा जबतक वह जियेगा हम उसकी ओरसे कभी निश्चिन्त न होंगे इससे मुझे उस पापीको वधना-ही उचित है॥

सहदेव–आर्य शान्त हूजिये शान्त हूजिये, सुनिये यह क्या कलकल हो रहा है॥

(नेपथ्यमें बडे ज़ोरसे बाजा बजता है और शंखोंकी ध्वनि होती है)

सह०—(सुनकर) हे आर्य! ये जो बाजे बज रहे हैं और शङ्खोंकी ध्वनि हो रही है उससे ऐसा जान पड़ता है कि यज्ञ समाप्त होगया॥

भीम०—हां, भगवान् श्रीकृष्णजीकी कृपासे यज्ञ समाप्त हुआ दुर्योधनके कर्मोंसे तो उसमें विघ्न पड़ाही था॥

(नेपथ्यमें गान)

चौपाई।

पौरव वंश युधिष्ठिर राजा। मानो भूषण भूप समाजा॥
सत्य धर्म है जाकी शरना। करुणासिंधु दीनदुख हरना॥
धर्म नरेश महा विज्ञानी। विप्र सनेही अतिशय दानी॥
आसन बैठ करैं रखवारी। दंड खलनको देवैं भारी॥
पीड़ा दुखियन केर निवारें। प्रजा हेत नित सभा विहारें॥
तेज पुंज यश है जग छाया। साम्राज दुर्लभ पद पाया॥

दो०—जबलग हैं जग सूर्य शशि, रहै धर्म यश छाय॥
जय जय जय भूपाल मणि, हों सब देव सहाय॥

सह०—(सुनकर) हे आर्य! वन्दीजन महाराजकी स्तुति गारहे हैं ऐसा जान पड़ता है महाराज यज्ञमेंसे उठनेको हैं चलें हमभी वहां शीघ्र पहुंच जायँ॥

(दोनों जाते हैं)

दूसरा गर्भांक।

स्थान इन्द्रप्रस्थ राजा युधिष्ठिरका महल (राजा युधिष्ठिर अपने भाइयोंके साथ बैठे हुए दिखाई देते हैं)

युधि०—(अपने भाइयोंसे) अब सब राजा जो हमारी यज्ञमें इकट्ठे हुए थे विदा हुए और हमारे सदाके उपकारीभगवान् श्रीकृष्णजीभी आज द्वारकाको सिधारे

अब केवल दुर्योधन और शकुनी रह गये हैं वहभी एक दो दिन में विदा होकर हस्तिनापुरको जायँगे मुझे ऐसा जान पड़ता है हमारी इस लक्ष्मीको देख कर दुर्योधन को बड़ी दाह हुई है मैं उसको सदा अप्रसन्नमुख देखता हूँ ऐसा न हो बिगाड़ फिर होवै॥

भीम०–इसमें कोई सन्देह नहीं कि वह हमारे नाश करने के उपाय सोचेगा परन्तु आप निश्चिन्त रहिये अब हम उसके किसी उपाय को चलनें न देंगे पहिले हम दुर्बल थे और उसके पिता के आधीन थे अब वह बात नहीं रही है॥

अर्जुन०–तो भी हमें कोई ऐसी बात न करनी चाहिये जिस से बिगाड़ होवै॥

सहदेव०–हमारी ओरसे बिगाड़की कोई बात न होगी उसी का कुटिल हिरदा कभी उस को चैन न लेने देगा॥

नकुल०–मैंभी यही समझता हूँ वह चुप न रहैगा और हमारे नाश करने के उपाय अवश्य सोचैगा राजसूय यज्ञके आरंभ कालमें जब सब राजा सोने चांदी और रत्नों की भेंटें उसको दे रहे थे जिस काम पर महाराजने उसको नियत किया था तो वह लगातार सांसें लेरहा था और शरीर जलाये और क्रोध के मारे कांप रहा था

युधि०–होनहार तो अवश्य होगी उसको रोक कौन सकता है तौभी मैं यह चाहता हू कि मेरे घराने में फूट न पड़ै ईश्वर उसको अच्छी मति दे॥

चारों भाई०—हम सब यही चाहते हैं भगवान् उसको अच्छी मति दें॥

युधि०—अब वह एक दो दिन में बिदा होकर हस्तिनापुर जानेवाला है तुम ये सब मयदानवकी रची हुई सभा के मकान उसको अच्छी तरह दिखादो॥

चारो भाई—जो आज्ञा॥

(शीघ्र पग धरताहुआ इन्द्रसेन का प्रवेश)

युधि०—क्यों इन्द्रसेन कुशल तो है?

इन्द्र०—क्षमा कीजिये महाराज क्षमा कीजिये मैं आपके बिना बुलाये चला आया परन्तु श्रीभगवान् महामुनि व्यासजी आकाश मार्गसे चले आरहे हैं लीजिये वह आही पहुंचे॥

(महामुनि श्रीव्यासजी आते हैं और पांचों पांडव खडे होजाते हैं और व्यासजीके पांयछूते हैं और फिर मुनिजीको बिठाकर आप उनके चरणोंके पास बैठते हैं और इन्द्रसेन बाहरजाता है।

श्रीव्यास०—हे राजन्! तुमने प्रालब्धसे दुर्लभ साम्राजपद पाया और तुम्हारे कारणसे कौरवोंकी बड़ाई हुई॥

युधि०—यह सब महाराजकी कृपासे मुझे मिला है परन्तु मुझे एक बड़ा भारी सन्देह हो गया है आपके सिवाय और कोई मेरे इस सन्देहको दूर नहीं कर सकता है मैंने नारदजीसे सुना है कि राजसूय यज्ञके अन्तमें बहुत बड़े उत्पात होते हैं सो वह उत्पात शिशुपालके मारे जानेके समय हुएथे उससमय आकाशसे वज्रपात हुआ और भूकम्प भी हुआ था इनका क्या फल है?

श्रीव्यास०—इन उत्पातोंका यह फल है कि तुम्हारे कुलपर

बहुत बड़ी विपत्ति पड़ैगी और आजसे तेरहवें वर्षके बीतनेपर सब क्षत्रियोंका नाश होजायगा और तुमको कारण बनाकर दुर्योधनके अपराधसे सब राजा लोग इकट्ठे होकर भीमसेन और अर्जुनके बलसे मारे जांयगे परन्तु तुम इस बातका कुछ सन्देह न करो क्योंकि इस संसारमें कालका उल्लंघन कोई नहीं कर सकता है अब तुम सावधान होकर पृथ्वीका पालन करो और मैं अब तुमसे बिदा होकर कैलास पर्वतको जाता हूं ॥

युधि०–इसी बातका हम पांचों भाई इस समय चर्चाकर रहेथे परन्तु जैसे आपने कहा है होनहार बलवान् है उसको कौन रोक सकता है जो कुछ हमारे प्रालब्धमें है वह अवश्य होगा ॥

(श्रीव्यासजी उठकर जाते हैं और पांचों भाई उनके पीछे पीछे पहुंचानेको जाते हैं और परदा गिरता है)

तीसरा गर्भांक।

स्थान इन्द्रप्रस्थ.

राजा युधिष्ठिरकी सभाके मकान और बाग.

(राजा दुर्योधन शकुनी भीमसेन अर्ज्जुन नकुल और सहदेवका प्रवेश)

सहदेव–(दुर्योधनसे)

चौपाई ।

देखहु राजन बाग सुहावा । सुरनर मुनि सबके मनभावा ॥
लागे वृक्ष मनोहर नाना । जिनकर नाम न जाइ बखाना ॥
दिव्य विटप ये चहुंदिशि सोहैं । देखतही सबके मन मोहैं ॥

नव पल्लव फल फूलन छाये। कोमल सुरस सुगंध सुहाये॥
भँवर गुंज होवे चहुँ ओरा। चित्त हमार लुभाय न थोरा॥
गुंजत मंजुल मधुकर श्रेनी। त्रिविधि बयारि बहे सुखदेनी॥
फटिक तड़ाग अनेक सुहाये। देखत जो सुरनर मनभाये॥
हंस हंसिनी कराहिं विलासा। उत्तम कमल कुमुद चहुँ पासा॥
नाना पक्षि मधुर धुनि करहीं। बोलत मन कामिन कर हरहीं॥
कुहू कुहू कोकिल ध्वनि करहीं। सो सुनि ध्यानमुनिनके टरहीं॥
दो०नीलकंठ कलकंठ शुक, चातक चक्र चकोर॥
भांति भांति बोलैं विहँग, श्रवण सुखद चित चोर॥

नकुल०-(एक सूखे हौजके पास जाकर) आइये इस हौजको देखिये जो स्फटिकका बना हुआ है देखिये यह कैसा सुहावना है॥

दुर्यो०-(शकुनीसे) हे मामा यह हौज़ कैसा प्यारा लगता है।

जयकरी छंद।

फटिक सरोवर सोहै श्वेत। पवन बेग जल लहरैं लेत॥
मातुल मो मन गयो लुभाय। करन चहत क्रीड़ा सुखदाय॥

(कपड़े उतारकर हौजमें उतरता है और हौजको सूखा पाकर लज्जित होजाता है)

सहदेव०-हे राजन् यह तो सूखा हौज़ है इसमें जल न होने परभी आप कपड़े उतारकर क्यों उतरे?

(दुर्योधन हौज़मेंसे निकलता है और कपड़े पहिनता है और सब आगेको बढ़ते हैं)

नकुल०-मय दानवकी अद्भुत शिल्पविद्याके कारण यह भ्रम इनको हुआ पानीसे भरेहुए एक हौज़को दिखाकर दुर्योधनसे) आइये अब इस हौज़को देखिये जिसके बनानेमें

उस दानवने अपनी सारी विद्याको खर्च करदिया है॥
दुर्यो०-(शकुनीसे)

जयकरी छंद।

अद्भुत अस्थल देखो भूप। फटिक शिलासों रचो अनूप॥
भानु प्रकाश पड़ो है सोइ। सकल बाग यह जगमग होइ॥

हे मामा! यह स्थल कैसा प्यारा और सुहावना है आइये इसको उतर कर देखें।

(यह कहकर हौज़ में कूद पड़ता है और उसके पानी में डुबकियां लेने लगता है)

भीम०-(खिलखिलाकर) अहा क्या खूब पानीमें डुबकियां ले रहा है अचरज है इस मूर्खको पानी और स्थलमें भेद नहीं जान पड़ा सच है।

पिता अंध क्यों सूझै पूता.

(दुर्योधन हौज़से निकलता है और कपड़े बदल कर आगेको बढ़ता है और सब लोग एक मकानमें प्रवेश करते हैं)

सहदेव०-(दुर्योधनसे) हे राजन्! यह नृत्यभवन है और वह दूसरे अनेक मन्दिर मयदानवके रचे हुए हैं आइये इनको देखिये॥

चौपाई।

अद्भुत भवन बने ये भाई। शोभा जिनकी वरणि न जाई॥
रतन अनेक जड़े तिनमाहीं। अति विचित्र कहि जात सो नाहीं
मय दानव निज हाथ सँवारे। फटिक रचित मणि कंचन धारे॥
भोगवती जो अहिकुल वासा। अमरावती जो इन्द्र निवासा॥
तिनते अधिकरम्य ये सो हैं। चहुँ दिशि कंचन मुनिमन मोहैं॥

दुर्योधन०-(नृत्यभवनमें प्रवेश करके शकुनीसे)

जयकरी छंद।

मातुल देखो भवन अनूप। रत्नन जड़ित सुवर्ण सुरूप॥
चकाचोंध होवैं मम नैन। देखत शोभा रहत न चैन॥
मन्दिर ऐसो देखो नांह। है अपूर्व ये सब जग मांह॥

इसकी दीवारोंमें रत्नोंके बने हुए पक्षी ऐसे जान पड़ते हैं मानो वह सजीव हैं और हमारे आनेके कारण चौकन्ने होकर पर खोलके उड़ना चाहते हैं आइये यह जो दरवाज़ा खुला हुआ दिखाई देता है इसमेंसे भीतरको चलें।

(दरवाजेके पटोंसे टकराकर अचेत होकर बैठ जाता है)

नकुल०—(हँसकर) यह दरवाज़ा तो बंदहै इसमेंसे आपने क्यों प्रवेश करना चाहा?

दुर्यो०—(चेतन होकर और उठकर) बड़ा धोखा हुआ यह दरवाज़ा तो सच बंदथा आइये अब इस दूसरे दरवाज़ेको खोलकर भीतरको चलें॥

(ज़ोरसे दरवाज़ेको धक्का देता है और शिरके बल नीचे गिरता है)

भीम०—(खिलखिलाकर) फिर धोखा खाया, अरे मूर्ख! यह दरवाज़ा तो आपही खुला हुआ है इसके खोलनेको इतना बल क्यों दिखाया॥

अर्जुन०—नहीं इन्होंने धोखा खाया अजनबी आदमी धोखाही खायगा मयदानवकी अद्भुत शिल्पविद्याके कारण इन्होंने धोखा खाया (दुर्योधनको उठाकर) उठिये राजन्! आपको बहुत बड़ा भ्रम हुआ॥

(दुर्योधन उठता है और थोडी दूर चलकर एक दरवाज़ेके सामने जो खुला हुआ है खड़ा हो जाता है परन्तु मारे भ्रमके उसको बंद समझकर नहीं घुसता है)

सहदेव०—हे राजन्! यह दरवाज़ा तो खुला हुआ है आप इसमें-से क्यों नहीं प्रवेश करते (आगेको चलकर) आइये अब हम इस दरवाज़ेमेंसे उस मकानको चलें जहां महाराज बैठे हुये आपकी राह देखरहे हैं ॥

(सबके सब दरवाजेमेंसे प्रवेश करके भीतरको जाते हैं और परदा गिरता है)

इति प्रथमोऽङ्कः।

श्रीः।

अथ

दूसरा अंक।

पहिला गर्भांक।

स्थान हस्तिनापुर राजा धृतराष्ट्रके महलकी डयोढी.

(दो द्वारपाल बैठे हुये दिखाई देते हैं)

पहिलाद्वारपाल—कहो भाई! आजके समाचार क्या हैं ॥

दूसराद्वारपाल—बहुत बड़ा आनंददायक आजका समाचार यह है कि, हमारे स्वामीपुत्र महाराज दुर्योधन क्षेम कुशल पूर्वक इंद्रप्रस्थसे लौट आये हैं ॥

प॰द्वा॰—यह तो मैं भी जानता हूं परंतु यह तो कहो कि, महाराज दुर्योधन प्रसन्न अथवा अप्रसन्न आये हैं ॥

दू॰द्वा॰—यह मैं क्या जानूं, हम सेवकोंको राजाओंके मर्म कैसे जान पड़ें ॥

प॰द्वा॰—मैंने तो यह सुना है कि, वह वहांसे बहुत अप्रसन्न आये हैं पांडवोंने उनका यथोचित सत्कार नहीं किया किन्तु उनका अपमान किया इससे वह बहुत अप्रसन्न हैं ॥

दू॰द्वा॰—यह तो बड़ा अचरज है महाराजा युधिष्ठिर तो बड़े साधु स्वभाव राजा हैं उनसे ऐसा होना असम्भव है ॥

प॰द्वा॰—यह तो तुम सच कहते हो परन्तु मैंने जो कुछ सुना था वह तुमसे कहा झूंठ सच भगवान् जानै ॥

(नेपथ्यमें)

हे द्वारपालो ! तुम किधर हो? सुनो! कौरवोंमें श्रेष्ठ महाप्रतापी

राजा दुर्योधन श्रीमंत महाराजा युधिष्ठिरकी यज्ञको देखकर क्षेम कुशलपूर्वक इन्द्रप्रस्थसे हस्तिनापुरको आगये हैं इस कारण महाराजकी यह आज्ञा है कि, प्रिय राजकुमारके आगमनका उत्सव भली विधिसे किया जावे राजभवनमें ध्वजा पताका लगाई जावें और रात्रिको दीप प्रज्वलित किये जावें सो तुम शीघ्र जाकर राजमंदिरके प्रधान कारभारीको महाराजकी यह आज्ञा सुनाओ ॥

दू०द्वा०—(सुनकर) यह तो हमारे कृपावंत कंचुकीजीकासा शब्द सुनाई देता है देखो वह बूढ़े बाबा लाठी टेकते हुये अंतःपुरकी ड्योढ़ीमेंसे चले आरहे हैं ॥

(एक अत्यंत बूढ़ा कंचुकी लाठी टेकता हुआ ड्योढ़ीके भीतरसे बाहर आता है)

दोनोंद्वार०—(खड़े होकर) कुंचुकीजीको प्रणाम, हमने महाराजकी आज्ञाको सुनलिया है, परन्तु यह तो कहो क्या आपने आज अधिक लोटा चढ़ायाहै जिससे आपके शरीरमें दूनाबल आगया है आज आप बहुत फुरतीसे पाँवधर रहेहैं॥

कंचुकी०—बस बकोमत और जो बहुत बकबक करोगे तो इसी लाठीसे मैं तुम्हारी खबर लूंगा अच्छा अब जाओ और महाराज की आज्ञा प्रधानजीसे कहो !!

दोनोंद्वार०—हम अभी जाकर महाराज की आज्ञा प्रधानजीसे कहे देते हैं आप प्रसन्न हूजिये ॥

(दोनो जाते हैं)

कंचुकी०—(आपही आप)अहा ! कैसी आनंदकी बात है कि,इस राजकुल की दिन प्राति दिन वृद्धि होती जातीहै हमारे महा राज गुणवान् शीलवान् धर्म्मस्वरूप और धर्म्मतनय

भूपालमणि राजा अजातशत्रुका यज्ञ कुशलके साथ समाप्त हुआ परमेश्वर, उनके वैभवको और भी अधिक बढावे और वैसेही हमारे स्वामी पुत्र राजा दुर्योधनको राज पाट धन दौलतसे परिपूर्ण रक्खै और भाई भाइयोंमें परस्पर प्रीति वनीरहै और आपुसका विरोध जो कुलके नाशका मूल है कभी उत्पन्न न हो (संजय को सामने आते हुये देखकर प्रकट) आर्य संजय! मैं आपको प्रणाम करताहूं आप इस समय कहांसे आरहे हैं॥

संजय०—मैं महाराजकी आज्ञासे राजा दुर्योधनके बुलाने को गयाथा वह अपने मामाजी शकुनीके साथ महाराजसे मिल-ने को आरहे हैं सो तुम जाकर महाराजको खबर करदो॥

कंचुकी०—जो आज्ञा मैं अभी जाकर खवर किये देताहूं॥

(लकडी टेकता हुआ अंतःपुरमें प्रवेशकरता है)

संजय०—(आपही आप) पांडवों कौरवोंमें वैरकी जड़ और भी अधिक गहरी होगई है,हा दैव! तू बड़ा कुटिल और क्रूर है अभी हम इंद्रप्रस्थ में यह देख आये हैं कि, जय जयकार शब्दसे सारा आकाश परिपूर्ण हो रहाथा और आगे थोड़े ही कालमें हमैं यह देखेंगे कि, दुर्योधनकी कुमतिसे यह श्रेष्ठ कुल विनाशको प्राप्त होगा॥

(बाहर जाता है)

दूसरा गर्भांक।

स्थान हस्तिनापुर राजा धृतराष्ट्र का महल.

(राजा धृतराष्ट्र दुर्योधन और शकुनी बैठे हुए दिखाई देतेहैं)

धृत०–(दुर्योधन से) क्यों बच्चा अच्छे तौ रहे अपने भाइयों के यज्ञ को देख आये कोई बाधा तौ तुमको नहीं हुई तुम्हारे भाइयों ने तुम्हारा आदर तौ अच्छा किया है?

शकुनी०–आदर तौ सब ही का हुआ परन्तु इन राजकुमार को बहुत बड़ा शोक उत्पन्न हुआ है।

चौपाई।

आयो देखि धर्म मख जब ते। निशि न नींद कुरुनाथहिं तबते॥
पांडव सभा प्रबल इन देखी। अति विस्मयवश रूप विशेखी॥
तहँ कछु भूप भयो अपमाना। ताते दुर्योधन दुख माना॥
एक राज्य में भे दुइ राजा। कीन्ह मंत्र यह जानि अकाजा॥
दल बटोरि कीजै रण रीती। लीजै धर्म नरेशहि जीती॥

धृत०–(दुर्योधन से)

मंत्र तुम्हार हमें नहिं भावत। ईश वाम अस वचन कहावत॥
समर दक्ष जिनके मन ऐसे। जीते जाहिं पांडुसुत कैसे॥
जिन के साथ सदा बनवारी। कर न सकहि रण शक्र प्रचारी॥
लरकांई खेलत नाहिं हारे। तासु न बिगरहि बात बिगारे॥
जीति सकै को धर्मकुमारा। जहँ जगदीश आपु रखवारा॥
उन ते समर न पैहौ पारा। अब सुत मत यह करहु विचारा॥

धर्मराज अपराध विहीना । करत तात तुम मंत्र अलीना॥
दीन्हीं ईश तुम्हें ठकुराई । बैठ रहौ निज भवन चुपाई ॥
सुत जग जन्म सुफल कर लीजे । बंधुविरोध कदापि न कीजे ॥

दुर्यो०–यह आपका कहना बहुत ठीक है परन्तु इस संसारमें ऐसे लोग विरले हैं जो अपने बराबर वालोंको बढ़ते हुए देखकर न कुढ़ें मैंने इन्द्रप्रस्थ जाकर युधिष्ठिरकी राजसूय-यज्ञमें उसकी उस लक्ष्मीको अपनी आंखोंसे देखाहै जो आजतक मर्त्यलोकके किसी राजाको तो क्या राजा-इन्द्रकोभी कभी न मिली होगी इस सम्पूर्ण पृथ्वीके राजाओंको अर्जुनकी हत्याओंके बलसे युधिष्ठिरके आधीन देख कर मैं जला जारहा हूं सो इसी कारणमैं दिन दिन सूखता जाता हूं, हे पिता! मै इस दुःखको अब सह नहीं सकता हूं मैं पानीमें डूब मरूंगा अथवा अग्निमें प्रवेश कर जाऊंगा अथवा विषपान करकै सोरहूंगा ॥

धृत०-युधिष्ठिरको क्या ऐसा मिलगया है जिसको देखकर तुम्हारे तन और मन दोनोंमें आग भडक गई है ॥

दुर्यो०-युधिष्ठिरकी लक्ष्मीका वृत्तान्त विस्तारपूर्वक कहनेकी मुझमें सामर्थ्य नहीं है परन्तु कुछ थोड़ासा हाल आपसे इस समय कहताहूं आप सावधान होकर सुनिये ॥

चौपाई ।

देश देशके ब्राह्मण आये । वैदिक लौकिक सबहिं सुहाये॥
वेद पाठ करते चहुँ ओरा । धर्मराज भूपतिके धोरा ॥
अर्घपाद्य भूपति तिन दीन्हा । विविधभांति नृप आदर कीन्हा॥
दासी दास चतुर बहुतेरे । पहिरे भूषण बसन घनेरे ॥
सहस अठासी विप्रन केरी । सेवा करैं नित शाम सबेरी ॥

विप्र सहस दश एकहिं बारा। जिनकर कोऊ पाय न पारा॥
स्वर्णपात्र महँ भोजन करहीं। धर्मराजकी जय उच्चरहीं॥
सुनि सुनि शंख धुनी अतिघोरा। मूर्च्छित होइ हृदय मन मोरा॥

धृत०—ब्राह्मणोंका भोजन कराना चाहो तौ तुम्हारे यहां भी हजारों ब्राह्मण इकट्ठे होजांयगे यह कौनसी बड़ी बात है जिसके लिये तुम इतना शोक करते हो॥

दुर्यो०—नहीं महाराज! इतनाही नहीं है अभी आगे वहां का हाल और सुनिये॥

जयकरी छंद।

जितने रहे भूमिपर भूप। द्वीप शैल बन वसत अनूप॥
अवलों सुने न जिनके नाम। ते आये पांडव नृप धाम॥
जिनकी संख्या कही न जाय। तिनदीन्हेअति आनँद पाय॥
गो धन रत्न अनेकन भार। देखत पाय सकै को पार॥
जिन दीन्हे गज सहस सुरूप। तेऊ रुके द्वारपर भूप॥
नृप गंधर्व चित्ररथ नाम। अश्व चारि सौ दिये सकाम॥
द्वै सहस्र अश्व अरु गज बीस। दियो वसुदान भूप महीश॥
दासी सहस सनेत्र विशाल। दियो युधिष्ठिरको पांचाल॥
मलयाधीश मलयको भूप। कनक पात्रभर अमित अनूप॥
धन मणि रत्न अनेकन भार। लै आयो पांडव नृप द्वार॥
एहि भांति धन रत्न अनूप। दियो युधिष्ठिरको सब भूप॥
धौम्य व्यास मुनि नारद संग। देवल असित भरे मुद अंग॥
सब ऋषियन मिल किय अभिषेक। धर्म नृपतिको सहित विवेक।
बाजे तहँ बहु शंख महान। सुनि सुनि सो निकले ममप्रान॥
भये जे पूर्व भूप अति पर्म। तिनतेअधिक भयो नृपधर्म॥
राजसूय करि यज्ञ महान। हरिश्चन्द्रके भयो समान॥

ऐसी देखि पार्थश्री भूप। हमें न जीवन लगत अनूप ॥

शकुनी०-हे राजन् मत घबड़ाओ मैं इस सारी लक्ष्मीको छीन लेनेका अच्छा उपाय जानता हूं मुझे जूआ खेलना बहुत अच्छी तरह आता है मेरे बराबर इस खेलमें और कोई नहीं है तुम राजा युधिष्ठिरको बुलवाओ मैं उनके साथ जूआ खेलकर छलके पांसोंसे उनकी सब लक्ष्मीको छीन लूंगा ॥

चौपाई ।

ऐहैं धर्म महीपति आछे। युद्ध जुआ पग धरैं न पाछे ॥
देश कोश नृप सकल लगैहै । जीति लेव सब रह नहिं जैहै ॥
युद्ध किये पांडव नहिं हरि हैं। उनकर पक्ष कृष्ण तब धरिहैं ॥
भूप हमार मानि सिख लीजै । अपर बात जनि चित्त धरीजै॥

दुर्यो०-(धृतराष्ट्रसे) सुनिये महाराज ! मेरे यह मामाजी युधिष्ठिरकी सब लक्ष्मीको पांसोंसे जीति देनेको कहते हैं आप युधिष्ठिरको जूआ खेलनेको बुलवाइये ॥

धृत०-अभी हम कुछ नहीं कह सकते हैं पहिले हम अपने धर्मके जान्नेवाले महाविज्ञानी मंत्री विदुरजीसे सलाह करलें तब कुछ कहेंगे ॥

दुर्यो०-आप विदुरजीसे सलाह लीजियेगा तो वह जुआ खेलनेकी आपको कभी सलाह न देंगे और आपके रोकने पर मैं अपने प्राणत्याग दूंगा मेरे मरनेपर आप विदुरजीके साथ आनन्दपूर्वक राज्य कीजियेगा ॥

धृत०-(डरकर) हे मेरे पुत्र ! मत घबड़ाओ मैं तुम्हारी मनोकामना पूरी करनेको तैयार हूं, इधर है कोई ?

(एक प्रतिहारी आता है)

प्रतीहारी०–(आगे बढ़के और हाथ जोड़कर) महाराजकी क्या आज्ञा है ?

धृत०–तू अभी जाकर इस नगरके सब चतुर कारीगरों को इकट्ठा करके उनको मेरा यह हुक्म सुना कि तुम सब लोग मिलकर एक ऐसी सभा तुरन्त तैयार करदो जिसमें हजारों खंभे और सैकड़ों दरवाज़े हों और उन खंभोंमें चारों तरफ़ रत्न ऐसे जड़े जांय कि वह सभा जगमगाने लगे ॥

प्रतीहारी०–जो हुक्म, अभी जाता हूं ॥

(बाहर जाता है)

धृत०–(दुर्योधनसे) अबमैं विदुरजीको बुलाकर उन्हें इन्द्रप्रस्थको पांडवोंके बुलाने के लिये भेजता हूं तुम निःसंदेह रहो ॥

दुर्यो०–आप उनको बुलाकर शीघ्र भेजिये और मैं अब जाता हूं ॥

(बाहर जाता है और परदा गिरता है)

तीसरा गर्भांक।

स्थान हस्तिनापुर राजा धृतराष्ट्र के रनवासकी ड्योढ़ी।

(एक अत्यन्त बूढ़ा कंचुकी ड्योढ़ीपर बैठा हुआ दिखाई देताहै)

कंचुकी०-(आपही आप)मुझे महाराजने यह आज्ञादी है, कंचुकी तू यहीं बैठा रह हमारे मंत्री विदुरजी आते होंगे आतेही उनको हमारे पास लेआना सो मैं महाराजकी आज्ञाके अनुसार यहां बैठा हुआहूं॥हाय बुढ़ापा! कितना बड़ा दुखदाई है यह जो लकड़ी मेरे हाथमें है वह मुझे सहारा देनेको न

हो तो मैं खड़ाभी न हो सकूं चलना फिरना तो कैसा, यों तो मेरे बुड्ढे होनेसे क्या सबही अंतःपुर रक्षकों की यही दशा रहती है क्योंकि आंखोंके होने परभी नहीं देख सकते हैं सुनकर भी नहीं सुन सकते हैं और सामर्थ्य रखने परभी लकड़ी हाथमें लीजाती है॥ इस ड्योढीकी नौकरी करते करते मुझे बरसों हो गये मैंने इन्हीं आंखोंसे महाराजके पिता विचित्रवीर्य और उनके पितामह राजा शान्तनु को देखा है, हाय! उन दिनोंकी सुध करकै मुझे अपनी जवानी याद आती है जब मैं इसी ड्योढ़ीपर अपने स्वामी की नौकरी दौड़ दौड़ कर करता था, हाय! अब तौ मैं अधमरा सा होगया हूं बहुतेरा साहस करता हूं कि, उठकर चलूं और देखूं कहीं विदुर जी आते तौ नहीं हैं पर चलना तौ कैसा उठनाभी कठिन है अच्छा इस लकड़ी को टेककर चलूं और देखूं तौ सही कहीं वह आते ही होवें (लकड़ी टेक कर कुछ दूर चलता है और फिर ठैर जाता है) क्या यह विदुरजीही आ रहे हैं ? पढ़को कारण मेरी आंखों की ज्योति घट तो गई है तब भी मुझे इतना तौ सूझ पड़ता है कि अपने स्वामी के प्रतिदिन आनेवाले मनुष्यों को अच्छी तरह पहिचान लूं (आगे बढ़कर प्रगट) मंत्रीजी को प्रणाम करता हू, महाराज! आपकी बाट देख रहे हैं॥

विदुर-अच्छा कंचुकी,जहां महाराज हों वहां मुझे तुम ले चलो॥

(दोनों रनवास में प्रवेश करते हैं और परदा गिरता है)

चौथा गर्भांक।

(राजा धृतराष्ट्र और विदुर दोनो बैठे हुए दिखाई देते हैं)

विदुर—महाराज की जय हो भगवान् आप को सदा सुखी रक्खें

धृत०—यहां सुख कैसा एक बड़े दुःखकी बात प्रगट हुई है जिससे मेरे मन में बहुत बड़ी चिन्ता उपजी है ॥

विदुर—यह चिन्ता की बात कैसी आप को तौ प्रसन्न होना चाहिये कि, आप के भतीजे युधिष्ठिर को साम्राजपद मिला है और सम्पूर्ण पृथ्वी के राजाओंने आकर उसको भेटें दीहैं क्या इस से आपका मन प्रसन्न नहीं होता है?

धृत०—यह तौ तुम सच कहते हौ पर भगवान् ऐसा करता कि, यह सब कुछ मेरे पुत्र दुर्योधन को मिलता ॥

विदुर—क्या आप की समझ में दुर्योधन और युधिष्ठिर में कोई अन्तर है ?

धृत०—अन्तर तौ नहीं है पर क्या करूं दुर्योधन को युधिष्ठिर के ऐश्वर्य्य को देख कर बहुत शोक हुआ है वह दुबला और पीला पड़गया है और सूखता जाता है और वह मेरे तन का पुत्र है ॥

विदुर—आप उसे समझाइये जिससे भाइयोंमें फिर फूट न पड़े और जो दुर्योधनके कर्मोंसे इस घरानेमें फूट पड़ैगी तौ आप समझ लीजिये कि इसका अन्त अच्छा नहीं है ॥

धृत०—अभी दुर्योधन अपने मामा शकुनीके साथ आयाथा शकुनीने उसको युधिष्ठिरके साथ जूआ खेलने की सलाह दीहै जूएके द्वारा युधिष्ठिरकी सारी लक्ष्मीको वह छीन लेना चाहता है इसमें अब तुम्हारी क्या सलाह है ?

विदुर—आपकी जूआ खिलानेकी सलाह मुझे पसंद नहीं है आपको वह बात करनी चाहिये जिससे आपके बेटों और भतीजोंमें फूट न पड़े ॥

धृत०–ईश्वर चाहैगा तौ फूट न पड़ैगी परन्तु बुरा हो या भला हानि हो या लाभ हमको जूआ खिलाना अवश्य है सो तुम किसी बातकी चिन्ता मतकरो हमारे तुम्हारे भीष्मजी और द्रोणाचार्य्यजीके होतेहुए कोई बात विगाड़की न होने पायेगी अब तुम शीघ्रगामी घोड़ोंको रथमें जोड़कर जल्दी इन्द्रप्रस्थको सिधारो और युधिष्ठिरको बुलालाओ॥

विदुर–जो महाराजकी आज्ञा पर मेरी सलाह तौ इस जूएके खिलानेकी नहीं है मैं फिर जतलाए देताहूं कि इसका अन्त अच्छा न होगा॥

(यहं कहकर विदुरजी बाहर जाते हैं)

दुर्योधनका प्रवेश।

दुर्यो०–क्या आपने विदुरजीसे सलाह पूछी है? उन्होंने तौ अवश्य हमारी सोची हुई बातको नापसंद किया होगा॥

धृत०–तुम सच कहते हो मुझे भी विदुरजीका कहना ठीक मालुम होता है इसलिये मैं तुमसे फिर कहता हूं कि तुम जूआ मत खेलो विदुरजी इस जूएको अच्छा नहीं बतलाते हैं और वह बड़े ज्ञानी हैं और हमारे अनहित कोई बात कभी नहीं कहैंगे मुझे जूआ खेलनेमें सिवाय बैरके और कुछ नहीं दिखाई देता है इसलिये तुम जूआ मत खेलो॥

दुर्योधन–अच्छा जो आपको विदुरजीहीकी सलाह पर चलना अच्छा मालुम होता है तो उसी पर चलिये और मुझसे हाथ धो बैठिये॥

धृत०(घबड़ाकर) नहीं नहीं पुत्र! ऐसा नहीं है जो मुझे तुमसे हाथ धो बैठना होता तो क्यों मैं तुमको पालकर इतना

बड़ा करता देखो जब तुम्हारा जन्म हुआथा तब सब लोगोंने एकमुख होकर मुझसे यह कहाथा कि, हे राजन्! तुम अपने इस पुत्रको त्याग दो यह अपने कुलका नाश करनेवाला होगा परन्तु मैंने पुत्रके मोहसे तुमको नहीं त्यागा, माता और पिताको पुत्रके लिये जो जो काम करने कहे गये हैं वह सब हम करचुके हैं बालकपनसे हमने तुमको बड़े लाड़से घरमें रखकर पाला है और तुमको अपने भाइ-योंमें सबसे बड़ा होनेके कारण राजभी मिला है नाना प्रकारके अच्छे २ पदार्थ जो सबको नहीं मिलते हैं तुम्हा-रे लिये मौजूद हैं फिर तुमको पराई लक्ष्मीको देखकर जलना उचित नहीं है ॥

दुर्यो०—भला वह कौनसा मनुष्य होगा जो अपने शत्रुकी वृद्धिको देखकर न जलैगा इस दौलत और धनकी दाह तो अलग रही सभाके मकानोंको देखनेके समय पांडवोंने जो हँसी मेरी की वह मेरे कलेजेको वैसेही सुलगाती है जैसे जंगलकी आग किसी वृक्षमें लगकर उसको सुलगाती हो ॥

धृत०—हे पुत्र! तुमको पांडवोंसे बिगाड़ करना नहीं चाहिये युधिष्ठिरमें कपट किंचित् नहीं है और वह तुमसे विरोध नहीं रखता है पांडव तुम्हारे बाँहबल हैं वह तुम्हारे भाई हैं जो धन उनके पास है वह तुम्हाराही धन है तुम्हारे और पांडवोंके दादा और परदादा एकहीथे हममें और उनमें कोई अन्तर नहीं है ॥

दुर्यो०—यह आपने सच कहा परन्तु जो लोग सगावत पर ध्यान देकर क्षत्रियोंका धर्म नहीं करते हैं वह इस संसारमें अवश्य नष्ट होते हैं ॥

धृत०- जो कुछ तुम कहते हो उसमेंसे मुझे कुछभी अच्छा नहीं लगता है अब तुम्हारी जैसी इच्छा हो करो ॥

(एक प्रतीहारी आता है)

प्रतीहारी–महाराजकी जय हो महाराजकी आज्ञाके अनुसार इस नगरके चतुर कारीगरोंने एक बहुत अच्छी सभा तैयार करदी है जिसमें हजार खंभे और सौ दरवाजे नाना प्रकारके रत्नोंसे जड़े हुए लगे हैं।

धृत०–अच्छा मालूम हुआ (दुर्योधनसे) लो अब सभा तो बनकर तयार हो गई और विदुर जीभी इन्द्रप्रस्थ को पांडवोंके बुलाने को गये होंगे ईश्वर इस सबका परिणाम अच्छा करै ॥

दुर्यो०–आप कुछ चिन्ता न कीजिये सब अच्छा ही होगा मैं अब सभा देखनेको जाता हूं ॥

(दुर्योधन उठकर जाता है और परदा गिरता है)

इति द्वितीयोङ्कः।

श्रीः ।

तीसरा अंक।
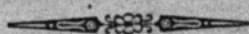
पहला गर्भांक।

स्थान इन्द्रप्रस्थ राजा युधिष्ठिरका बाग़ पहफटनेका समय।

(उर्वशी और रम्भा दो अप्सरायें आकाशमार्गसे आती हैं और पीछे से एक गंधर्व छुपा हुआ आता है)

उर्वशी—हे सखी रम्भा! यह बाग़ कैसा सुहावना है आजकी इसकी शोभा मुझे बहुत प्यारी लगती है वह मेरे चित्तको हरे लेती है मुझे तो ऐसा जान पड़ता है कि प्यारी वसंत ऋतु आगई॥

रम्भा-क्या तुझे नहीं दिखाई देता है कि,वसंत ऋतुके फूल चारो ओर फूल रहे हैं,देख वह आम के पेड़ मौरके बोझ से झुक रहे हैं तड़ागोंमें कमल अपनी शोभा को अलग बढ़ा रहे हैं और प्रत्येक क्यारीमें जो छोटे छोटे पौदे नए और कोमल पत्तोंसे लदे हुए हैं उनमें भी कलियां फूट रही हैं, इधर सुन वह कोकिला अपनी प्यारी सुरीली आवाज़से आम के उस वृक्ष पर बोल रही है और भौरों के झुंड के झुंड फूलों के समीप गुंजार रहे हैं एक तो वसंत का आगमन दूसरा पह फटने का समय यह दोंनो मिलकर इस समय इस बाग की शोभा कैसी न कुछ बढ़ा रहे हैं॥

गंधर्व--(प्रगट होकर) रम्भा सच कहती है आज इस बागका ऐसा ही समा है

राग धनाश्री।

चहकि चकोर उठे शोर करि मोर उठे बोल ठौर ठौर उठे कोकिल सुहावने। खिल उठीं एकै बार कलियां अपार हिल हिल उठे मारुत सुगंध सरसावने॥ पलक न लागीं अनुरागीं इन नैनन पै लपटि गये धौं कबै तरु मन भावने। उमँगि अनन्द भरे सब जीव चहुँ दिशि लागे फूलि फूलि सुगंध मलिन बरसावने

रम्भा०--हे प्यारी सखी उर्वशी! क्या अच्छा गीत इस गंधर्वने समयके अनुसार गायाहै क्या इन बातों से तुझे नहीं जान पड़ता है कि, प्यारी बसंत ऋतु आगई है और तेरे खेलने और नाचने गाने के दिन आगये हैं॥

उ०--हां सखी तूने अच्छी याद दिलाई अब तूही बसंत ऋतु का कोई अच्छा गाना गा, तू गाने बजाने में बड़ी चतुर है और जब कभी देवराज की सभा में तू गाती है तौ तेरे गाने को सुनकर सारे देवता मोहित हो जाते हैं॥

गंध०--उर्वशी सच कहती है॥

रं०--अरे हटरे मुए (उर्वशी से) हे सखी! क्या मेरा गाना तेरे गानेसेभी बढ़कर है तू तो मेरा ठट्ठा करती है तूही सब अप्सराओं की सरताज है और तेरे गाने को सुनकर राजा इन्द्र दूसरी अप्सराओं के गानेको पसंद नहीं करते हैं पर जो तू मुझे गाने ही को कहती है तौले यह गीत सुन॥

गाना गाती है। (सवैया)

फूलन दे अबै टेसू कदम्बन अंबन बौरन छावन देरी॥
री मधु मत्त मधूकन पुंजन कुंजन शोर मचावन देरी॥
क्यों सहिहै सुकुमारि किशोरि अरी कल कोकिल गावन देरी॥

आवतही बनि है घर कन्ताहि बीर बसंतहि आवन देरी ॥

राग बसंत।

कोयलिया बोलन लागिरे ॥ टेक।

फूल रही फुलवारी पिया पियारी ऋतु वसंत आई मदन जागे ॥ को० ॥ टेसू फूले अँबुआ मौले भ्रमर करत गुंजार । पिया बिन मेरो मन भयो विरागी ॥ को० ॥ अवध बीती अजहुँ नहीं आये कोऊ सौति बिरमाये । रैन दिवस रसना रटत उनही संग लागी ॥ को० ॥

उ०-धन्य है सखी धन्य है! तेरे इस गाने ने सारे बपगारे एक मोहिनीसी डाल दीहै देख वह कोकिला जो अपनी धुनमें लगी हुई मीठी सुरीली आवाजसे लगातार ताने तोड़ रहीथी तेरा गाना सुन्नेको वह भी चुप होरही है और जो पानी बाग में स्फटिक की नलियोंमें होकर जोरसे गिर रहाथा वह भी मानो तेरे गानेको सुन्नेके लिये थम गया है ॥

गंध०—नहीं नहीं अकेली कोकिलाहीने इस गानेको सुन्नेके लिये अपनी आवाजको बंद नहीं किया किन्तु सहस्र किरण-धारी भगवान् सूयक सारथी अरुणने भी रथके घोड़ोंको इस गानेको सुन्नेके लिये रोक लिया है और इसी कारण अभीतक अरुणका प्रकाशभी पूरा पूरा नहीं हुआ है ॥

रम्भा—दूरहो निलर्ज्ज! बस अब बहुत न बक (उर्वशीसे) प्यारी सखी! तू क्यों मेरा टट्ठा करती है भला मेरा गाना तेरे गानेके बराबर कहां है? अब तू भी कुछ गा ॥

उ०--ले मैं भी यह बुरा भला गीत गाती हूं ॥

(गाना गाती है)

(राग वसंत)

पथिक सन्देसो कहियो जाय।जाकी चपल बुद्धि तासोंकहावसाय उड़ियोरे भ्रमरा जाइयो वा देश।मेरे पियासे कहियो तू सन्देश॥ अरे फागुनके दिनबीते जात।मेरी अँगिया तड़क गई जोवनभार इकतौ सतावै मोहिं ऋतु वसंत।दूसरा सतावैदुख विरहका कंत। तीजी कोयल बोलै अम्बकी डार।चौथा पापीहा पियाकरै पुकार॥ इक बन फूल सकल बन फूले। जैसे चन्द्र चकोरन हूले। तीजा तरन तेज मोपै सह्योन जाय। जबमें तजूंगी प्रान फिर क्या करोगे आय॥

राग जैजैवंती।

बनत बनाऊं कछु बन नहीं आवै पियारे। सजन विन तल फत प्राण हमारे। सोच किये क्या होतरी सजनी वे तो कठिन हृदय समझाऊं कैसे कारे॥ तपूंगी ताप चहूं ओर अग्निदे तनको जराऊं तोमें पाऊं पीया प्राण पियारे। सखी सकल विधि कठिन भई है बीतत रैन गिनत गई मईके तारे॥

रम्भा—धन्य है सखी धन्य है! इसीसे तेरे गानेको महाराज देवराज बहुत पसंद करते हैं॥

गंधर्व—क्या तुझसे भी अच्छा गाना उर्वशीने गाया तेरी मीठी सुरीली आवाज़ने तो पत्थर कंकड़ आदि जड़ पदार्थोंमें भी जानडाल दीथी फिर जीवधारियोंका मोहित होना तो क्या रहा? अरी रम्भा! तू जैसी अपने रूपसे मनमोहिनी है वैसेही अपने गानेसे मोहिनी डालती है॥

रम्भा—दुरमुए! तू अब भी अपनी बड़बड़ किये जाता है॥

गंधर्व–इतना बिगड़ती क्यों है कुछ मैंने तेरी बड़ाई महाराज देवराजके सामने नहीं की जिससे वह प्रसन्न होकर तुझे मुझीको दे डालते, अरी! तू अपने रूप और जोवन पर इतना मत इठला और टुक मेरी ओर देख क्या मैं तेरे योग्य नहीं हूं ॥

रम्भा–पहिले अपनी सूरतको तो देख फिर मेरे लेनेकी इच्छा कर (क्रोध करकै) दुरहो मुए! अभी यहांसे चला जा नहीं तो तुझे ऐसा दंड दूंगी जो तू सदा याद करैगा ॥

(गंधर्व डरके मारे कांपता हुआ चला जाता है)

उ०–प्यारी सखी यह गंधर्व कौन है?

रम्भा–क्या कहूं सखी यह मुझे बहुत सताता है यह देवराजके मुँह बहुत लगा हुआ है और इसका नाम चित्रसेन है मुझसे अपनी प्रीति दिखलाता है और मेरे पीछे पीछे रहता है आज यहां भी मेरा खोज लगाता हुआ आपहुंचा॥

उ०–जो ऐसा है तो तू क्यों इसको भारी दंड नहीं देती है ॥

रम्भा–देवराजके कोपसे डरती हूं उनके मुँह यह गंधर्व बहुत लगा हुआ है ॥

उ०–अब वह मुआ चला गया और हम दोनोंके सिवाय इस समय इस बागमें तीसरा कोई नहीं है पहफट चुकी है और थोड़ेही कालमें सूर्यभगवान् उदय होनेवाले हैं आओ हम दोनों उस मनोहर फुलवाड़ीमें चलें जहां वह पानीका भरा हुआ स्फटिकका हौज़ है उसमें उतरकर हम दोनों जल क्रीड़ा करेंगी ॥

रम्भा–अच्छा आओ चलें ॥

(उर्वशी और रम्भा दोनों फुलवाडीमें प्रवेश करती हैं)

उ०—प्यारी सखी! यह मनोहर फुलवाड़ी और यह बारादरी जो इसमें बनी हुई है किसकी है! तू तौ जानती होगी मैं तौ आजही यहां आईहूं और तू पहिलेभी कईवार यहां आईथी।

रं०—यह फुलवाड़ी और बारादरी महारानी द्रौपदीजीकी है जो महाराजा युधिष्ठिरकी पटरानी हैं वह अपनी सखियोंके साथ यहां आकर अपना मन बहलाती हैं।

उ०—और इस फुलवाड़ीके एक कोनेमें बनाहुआ यह छोटासा प्यारा मन्दिर किसका है?

रं०—यह मन्दिर गिरीश कुमारी श्रीपार्वतीजीका है महारानीजी यहां आकर नित नैमसे गौरीकी पूजा करती हैं॥

उ०—आओ अब कपड़े उतारें और इस हौज़के जलमें प्रवेश करैं (कुछ आहट सुनकर और रुककर) हे सखी! ऐसा जान पड़ता है कोई स्त्रियां इधरको चली आरही हैं उनके नूपुरों और दूसरे गहनोंकी झंकार बराबर इधरही को चली आरही है और उनकी बोल चाल भी सुनाई देती है (कान लगाकर सुनती हैं)

(नेपथ्य में)

आओ महारानी इधर आओ पुष्पवाटिका को जाने की यह बाट है॥

उ०--हे सखी!ऐसा जान पड़ता है कि,महारानी द्रौपदी जी आप इधर को आ रही हैं और उन के साथ उनकी सखियां हैं देखो वह चली आ रही हैं आओ इस लता के आसरे में खड़े होकर हम उनको देखें और उन की बातों को सुने॥

(दोनों अप्सराएँ लता के पीछे छुपजाती हैं)

(महारानी द्रौपदी जी अपनी सखियों मनोजमंजरी और मदनमोहनी और अपनी दासी बुद्धिमती के साथ पूजा फुलवाड़ी में प्रवेश करती हैं दासी के एक हाथ पर पूजा और भोगकी सामग्री से भरा हुआ थाल है और दूसरे हाथ में पानी की भरी एक झारी है)

मनोजमंजरी०—महारानी जी आइये थोड़ी देर इस बारादरी में विश्राम करैं जबतक कि, सूर्यनारायण उदित हों ॥

(सब बारादरी में जाती हैं)

द्रौपदी०—हे मनोजमंजरी! इस फूलवाड़ी में से कुछ फूल मालती और सेवती के पूजा के लिये चुनले ॥

(मनोजमंजरी फूल चुन्ने लगती है)

उर्वशी०—(रम्भासे) देखरी रम्भा! महारानीजी के मुखकी कान्ति इस समय कैसी मलीन होरही है सारे शरीरका रंग फीका पड़ रहा है इस का क्या कारण होगा?

रम्भा०—मुझे भी अचरज है आज क्यों यह ऐसी मुख मलीन दिखाई देती हैं और ऐसे सबेरे यहां क्यों आई हैं यह सुकुमारी राजकुमारी कैसे इस समय की ठंडी हवा को सह रही हैं इनकी बातचीतसे कुछ हाल जान पड़ैगा ॥

मनो०मं०—महारानी जी! इतने फूल बहुत होंगे क्या और चुनूं?

द्रौ०—बहुत होंगे थोड़े से सूर्यनारायण के अर्घ के लिये रहने दे और शेष पूजा की सामग्री के थाल में रख दे ॥

मनो०मं०—अब सूर्यनारायण उदय हुआही चाहते हैं ॥

द्रौ०—उदय होहीगये वह देख उदयाचल पर्वतकी शिखरपर अंधेरेको नाश करनेवाले सहस्र किरणधारी सूर्य भगवान्

वह उदित हैं सो यह समय अर्घ देनेका है बुद्धिमती पानीकी झारी मुझे दे।

बुद्धिमती०-(झारी देकर महारानीजी यह पानीकी झारी है इससे अर्घ दो॥

द्रौ०-(झारीसे अर्घ देकर) हे भगवन्! मैं तुमको नमस्कार करती हूं तुम सदा मेरा कल्याण करो॥

(झारीको रख देती हैं और फूल चढ़ाती हैं)

हे प्यारी सखियो! अब मैं गौरीकी पूजनको मन्दिरमें जाती हूं तबतक तुम यहां ठैरना॥

(द्रौपदी और बुद्धिमती दोनों मंदिरमें जाती हैं)

उर्वशी०-(रम्भासे) अब इन सखियोंकी बातोंसे कुछ हाल खुलैगा॥

रंभा०-बहुत करकै तो यह कुछ बात करैंहीगी॥

मदनमोहिनी०-(मनोजमंजरीसे) देखरी सखी! यह हमारी सुकुमारी रानी जो अभी इतना कष्ट सहनेके योग्य नहीं हैं अपने ऊपर कितना क्लेश सहती हैं मुझे अचरज है कि, यह क्यों ऐसा कष्ट सहरही हैं॥

मनो०मं०-जबसे महामुनि भगवान् श्रीव्यासजीने हमारे महाराजसे यह कहा है कि, राजकुलपर बहुत बड़ी विपत्ति पड़ने वाली है और क्षत्रियोंका नाश होने वाला है तबहींसे उस विपत्तिके निवारणके लिये महारानीजी यह कष्ट अपने ऊपर सह रही हैं वह इस पुनीत माघमासमें प्रातःकाल सूर्यउदयसे पहिले स्नान करती हैं और सूर्यके उदय होने पर अर्घ देकर गौरीका पूजन करती हैं और अनेक दूसरे व्रत करती हैं अतिथियों और ब्राह्मणोंका भोजन तो नित्य

नेमसे सदाही होता है अपने प्यारे पतियोंके मंगलार्थ यह सब व्रत नेम पूजन इत्यादिक महारानीजी करती हैं यों तो होनहार होकर रहैगी ॥

मद०मो०–महारानीजीके सब व्रत और नेम और पूजनका कारण मैंने अब जाना ॥

रम्भा–(उर्वशीसे) हे सखी ! इसीसे महारानी जी व्रत और उपवास करते करते दुबली होगई हैं और उनके मुखकी कांति फीकी पड़गई है और जो चिन्ता उनके मनमें व्याप रही है उससे उनके शरीरका रंग पीला पड़गया है ॥

उ०–उनकी चिन्ता सच है एकदिन देवराजकी सभामें मैंने श्रीमन्महाराज वज्रपाणीको यह कहते सुनाथा, कि कौरव कुलमें बहुत बड़ा उपद्रव होनेवाला है जिससे सब क्षत्रियों पर और विशेष करके उस कुलपर बहुत बड़ी विपत्ति पड़ैगी हो न हो वही बात महामुनि व्यासजीने राजा युधिष्ठिरसे कही है ॥

रम्भा–जो ऐसा है तो भगवान् उनके नेम और व्रतको सुफल करै और विपत्तिका निवारण हो ॥

उ०–होनहार तो टलही नहीं सकती चाहै कोटि उपाय करो परन्तु इतना फल देवपूजन और नेम व्रत इत्यादिका चाहे होवै कि, घोर विपत्ति उठानेके उपरान्त कुशल रहै ॥

रम्भा–हे सखी! महारानीजी पूजन करके मन्दिरसे वह निकल रही हैं ऐसा न हो वह इधरहीको आयें और हमें देखलें इससे हमें अब यहांसे चलदेना चाहिये अमरावतीपुरीसे हमें निकलेहुए बहुतकाल हुआ और अभीतक हमने

जगपावन श्रीगङ्गाजीमें स्नान नहीं किया है जिसकेलिये हम अपने घरसे निकलींथी ॥

उ०-तू सच कहती है हम दोनोंको इस मर्त्यलोकमें संचार करते हुए बहुत काल व्यतीत हुआ तारोंको छांड़ हम अपने घरसे निकलीथीं और अब सूर्यनारायण उदय हो गये हैं इस मनोहर बागकी शोभाने इतनी देर हमें यहांहीं विरमालिया अब चलकर श्रीगङ्गाजीके जलमें गंगोत्तरीके निकट स्नानकरें और फिर अपने घरको लौटें ॥

(दोनों अप्सरायें चली जाती हैं)

द्रौपदी-(मन्दिरसे निकलकर) प्यारी सखियो! अब मैं पूजासे निवृत्त हुई आओ अब हम घरको चलें मुझे अभी श्रीमहारानी कुन्तीके चरणोंकी बन्दना करनी है ॥

(सब जातीहैं और परदा गिरता है)

दूसरा गर्भांक।

स्थान इन्द्रप्रस्थ राजा युधिष्ठिरका भवन।

(राजा युधिष्ठिर अपने भाइयों भीमसेन, अर्जुन, नकुल और सहदेवके साथ बैठे हुए दिखाई देते हैं)

युधि०--हे मेरे प्यारे भाइयो! तुमने तो सुना है जो कुछ महामुनि श्रीव्यासजीने कहा है मैं नहीं चाहताहूं कि, मेरे कारण क्षात्रियोंका नाश हो विधाता हम सब भाइयोंको ऐसी मति दे जिससे हम में आपुसमें कभी विरोध न हो डर है मुझे तो दुर्योधनसे उसकी जो हँसी सभामें यहां हुईथी वह कभी नहीं भूलैगा और वह बिगाड़ अवश्य करैगा।

भीम०-जब वह आप बिगाड़ करैगा तो फिर आप क्या

करेंगे क्या आप चुप रहेंगे और जब वह आपके नाश करनेके लिये उपाय सोचैगा तो क्या आप उसका निवारण न करैंगे॥

युधि०-वह चाहे जो कुछ करै परन्तु मैं इस समय यह प्रातिज्ञा करताहूं कि तेरह वर्षतक मैं कभी अपने भाई अथवा किसी दूसरे राजासे कठोर वचन नहीं कहूंगा और सब क्षत्रियों की आज्ञाको मानकर मैं उनकी सेवा करूंगा ऐसा करनेसे हम सबमें आपुसमें फूट न पड़ैगी फूटही लड़ाई का घर है, हे भाई अर्जुन! तुम क्या कहते हो?

अर्जुन-हम सब आपके आज्ञाकारी भाई हैं हमको सर्व्वदा आपहीकी आज्ञा मान्नी चाहिये॥

सहदेव-भाई अर्जुन ने बहुत ठीक कहा मेरी भी यही मति है॥

नकुल-मैं भी यह चाहताहूं कि हम सदा अपने बड़े भाईके आज्ञाकारी रहैं और जो उनकी इच्छा हो उसका सदा पालन करैं॥

युधि०-मैं बहुत प्रसन्न हुआ कि, मेरे सब भाई मुझसे बहुत प्रीति रखते हैं परमेश्वर सदा तुम्हारा कल्याण करै (सामने देख कर) क्या देवी द्रौपदी आरही हैं?

सह०-हां महारानी इधर आरही हैं॥

(द्रौपदीका प्रवेश)

युधि०-आओ देवी इस आसन पर विराजो तुम कुशलसे तो हो तुम्हारे मुखकमलका रंग फीका क्यों है?

द्रौ०-(बैठकर) आर्यपुत्र! मेरी कुशल आपकी कुशल होने-पर है परमेश्वर आपको सब भाइयों समेत संसारकी सब बाधाओंसे बचाये॥

सह०-हमारी रानीने जबसे श्रीव्यासजीके वचनोंको सुना है

तबहींसे वह मनहींमनमें चिन्ता करती रहती हैं इससे उनका शरीर पीला हो गया है मुखकी कांति फीकी पड़ गई है और अनेक व्रतोंके करनेसे वह बहुत दुबली हो गई हैं॥

युधि०—हे प्यारी! तुम इतनी चिन्ता क्यों करती हो दुःख सुख चक्रके समान घूमते रहते हैं मनुष्य कभी दुःख और कभी सुख भोगता है हमने भी तुम्हारे व्याहसे पहिले अनेक दुःख सहेथे हमारे जन्म लेतेही हमारे पिता स्वर्गवासी हुए और हम अपने ताऊ राजा धृतराष्ट्रके आधीन रहे यह भीमसेन गंगाजीमें डुबाए गये और हम सबोंको लाखके बनाये हुये घरमें बसाकर हमारे जलानेके उपाय किये गये परन्तु हमारे धर्मने हमारी रक्षाकी और फिर हमने घोर विपत्तिसे निकलकर तुमको प्राप्त किया उस समयसे अब तक हम अनेक प्रकारके सुख भोग रहे हैं अब बहुत सुख भोग चुके हैं इससे दुःखकी फिर बारी आई है यह दुःखभी न रहैगा मुझे निश्चय है कि, हमारा धर्म हमारी सदा रक्षा करैगा॥

द्रौ०—मुझे बहुत अचरज होता है कि आपके समान धर्मात्मा राजाको भी दुःख सहने पड़ते हैं आपने कभी धर्मसे अधिक प्यारा किसीको नहीं समझा किन्तु धर्मको प्राणोंसे भी अधिक जानते हो और सब जानते हैं कि आपने अपना राज और प्राण दोनों धर्मकेही निमित्त कर रक्खे हैं और मैं यह जानती हूं कि, आप चाहें इन अपने चारों भाइयों और मुझको छोड़ देंगे परन्तु धर्म को न छोड़ेंगे मैंने अच्छे मनुष्योंसे यह सुनाहै कि, धर्मकी रक्षाकरनेवाले राज्यकी रक्षा आप धर्म करताहै परन्तु मेरी

समझसें वह धर्म आपकी रक्षा नहीं करता है और जो वह आपकी रक्षा करता होता तो आपको जो दुःख सहने पड़े हैं वह आप कभी न सहते ॥

युधि०—हे प्यारी! मैं धर्मको कुछ फलके मिलनेकी आशासे नहीं करताहूं किन्तु मैंने धर्मके करनेका अपना स्वभावही करलिया है धर्मात्मालोग धर्मके व्योपारको नीच और बुरा समझते हैं क्योंकि जो कोई धर्मसे फलके मिलनेकी आशा रखता है उसको धर्मका मुख्य फल नहीं मिलता है और जो कोई अपनी पापबुद्धिसे नास्तिकताके कारण धर्ममें शंका करता है उसकोभी धर्मका मुख्य फल नहीं मिलताहै इससे हेदेवि! तुम धर्ममें शंका मतकरो॥

द्रौ०—हे आर्यपुत्र! मैं धर्मका अपमान और निन्दा किसी अवस्थामें नहीं करतीहूं मैं यह भली विधि जानतीहूं कि, मनुष्यको धर्मका मार्ग कभी न छोड़ना चाहिये परन्तु मुझे अचरज इस बातका है कि, इस संसारमें धर्मपर चलने वाले मनुष्य बहुत करकै दुःखही भोगते हैं ॥

(एक दासी आती है)

दासी—महाराजकी जयहो श्रीमन्महाराज विदुरजी अभी हस्तिनापुरसे चले आरहेहैं और महाराजसे मिलना चाहते हैं॥

युधि०—विदुरजी तो हमारे सदाके हितकारी हैं और फिर वह हमारे चचा हैं उनका अच्छीतरह सत्कार होना चाहये (अपने भाइयोंसे) तुम चारों आगे जाकर उनको लाओ॥

(चारों भाई बाहर जाते हैं और विदुरजीके साथ फिरआते हैं)

युधि०—(उठकर और विदुरजीके पांव छूकर) महाराज! मैं नंमस्कार करता हूं॥

द्रौ०--(उठकर और विदुरजीके पाँउ पड़कर) यह आपकी बहू आपको प्रणाम करती है ॥

विदुर--(दोनों को आशीर्वाद देकर) पुत्र तुम्हारा राज सदा अकंटक रहे और हे पुत्री! तुम्हारा सुहाग अचल रहे और तुम्हारा पातिव्रत धर्म सफल हो ॥

युधि०--महाराज! आप कुशल से तौ हैं? बड़े महाराज कुशल से तौ हैं? महाराज के सब बेटे उन के कहने में तौ हैं? और महाराज की सेवा तौ अच्छीतरह करते हैं? आपका मन कुछ उदास जान पड़ता है कहिये आप हमारी कुशलके लिये आये हैं अथवा कुछ और प्रयोजन है!

वि०--राजा धृतराष्ट्र अपने बेटोंके साथ कुशलसे हैं उन्हों ने तुम्हारी सब की कुशल पूंछकर यह कहला भेजा है कि, जैसी तुम्हारी सभा है वैसी एक सभा तुम्हारे भाइयों ने भी बनवाई है उसको तुम पांचो भाई आकर देखो और भाई भाई मिलकर मित्रता का जूआ खेलो यहां सब कौरव कुलके लोग इकट्ठे हैं और तुम्हारे देखने की अभिलाषा रखते हैं सो तुम वहां सब रानियों के साथ शीघ्र पहुँचो ॥

युधि०--जूंआ खेलने में हमको कल्याण दिखाई नहीं देता है ज्ञानवान् मनुष्य जान बूझकर जूआ कभी नहीं खेलते हैं परन्तु हम सब तौ आपकी आज्ञा पर चलनेवाले हैं आप कहिये कि आप की समझ में यह काम कैसा है?

वि०--मैं तौ जूए को सदा अनर्थ की जड़ समझता हूं मैंने इसके निवारण करने के अनेक उपाय किये परन्तु मेरा कोई उपाय न चला अन्त में धृतराष्ट्रका भेजा हुआ तुमको बुलाने को यहां चला आया सो तुम को जिस बात में कल्याण दिखाई दे वही करो ॥

युधि०—राजा धृतराष्ट्र के पुत्रों के सिवाय और कौन कौन कपटी खिलाड़ी वहां इकट्ठे हुए हैं ?

वि०—गांधार का राजा शकुनी वहुत बड़ा खिलाड़ी है वह मर्यादा छोड़कर खेलता है और पांसे जैसे चाहता है डाल सकता है और इस के सिवाय और भी बहुत से ज्वारी राजा वहां इकट्ठे हुए हैं ॥

युधि०—आप सच कहते हैं वहां बड़े बड़े छली कपटी खिलाड़ी इकट्ठे हुये हैं परन्तु इस संसार में कोई मनुष्य अपने वशमें नहीं है सब प्रालब्ध के आधीन हैं इससे मैं महाराज धृतराष्ट्र की आज्ञाको मानकर जूएमें आऊंगा बड़ों की आज्ञाका पालन करना सदा श्रेष्ठ होता है ॥

द्रौ०—क्या आप वहां जांएहींगे ? मुझे तो इस का अन्त अच्छा नहीं दिखाई देता है ॥

युधि०—देवी! तुम कोई चिन्ता मत करो सब मनुष्य प्रालब्धके आधीन हैं और जो बात होनी होती है वह होकर रहती है हमारे तुम्हारे रोकनेसे क्या वह रुक सकती है? फिर व्यर्थ शोक करनेसे क्या होता है(दासीसे)अरी सुवदना! तू जाकर हमारे सारथी इन्द्रसेन को हमारी ओर से यह कहदे कि, कल्ह सवेरे हम सब भाई सब रानियोंके साथ हस्तिनापुरको यात्रा करेंगे सो सब सामानके साथ रथ और घोड़े और हाथी और ऊंट तैयार रक्खे जांय और हमारी सवारीका रथभी भली भांति सजाया जाय हम प्रातःकालही यात्रा करेंगे ॥

दासी—जो आज्ञा,अभी जाकर सारथीजीसे कह देती हूं ॥

(बाहर जाती है और परदा गिरता है)

इति तृतीयोऽङ्कः ।

श्रीः।

चौथा अंक।

पहिला गर्भांक।

स्थान हस्तिनापुर राजा धृतराष्ट्रके महलकी ड्योढी.

(बूढा कंचुकी और एक द्वारपाल ड्योढ़ीपर बैठे हुए आपुसमें धीरे धीरे बातें करते हुए दिखाई देते हैं)

कंचु०—अन्तःपुर वासियोंसे मैंने अभी यह सुना है कि, वह पुरुष-शार्दूल भरतकुलभूषण पांडव वीर हस्तिनापुरको आज कलमें आनेवाले हैं, सो हे भाई ! तुम कुछ जानते हो यह वीर यहां क्यों बुलाये गये हैं क्या हमारे स्वामी स्वर्ग-वासी राजा पांडुके जेठे बेटे धर्मराजको हस्तिनापुरके राजपरभी स्थापित करेंगे जो ऐसा हो तौ पुरवासी और देशवासी सब लोग परम प्रसन्न होंगे ये पुरवासी अपने सच्चे हृदयसे उन धर्मात्मा और यशवान् राजा युधिष्ठिरको चाहते हैं सच है इसीसे वह धर्मात्मा राजा अजातशत्रुके नामसे विख्यात है भगवान् सदा उनकी रक्षा करें॥

द्वार०—(धीरेसे) तुम बहुत बूढ़े होनेके कारण न कुछ सुनते हो और न कुछ देखते हो मैं तो इधर उधर सब कुछ सुनताहूं और देखताहूं अब मैं तुमसे सच्चा हाल कहता हूं तुम सावधान होकर सुनो (कंचुकी सरककर द्वारपालके बहुत पास आजाता है) इस श्रेष्ठ कुलपर बहुत बड़ी विपत्ति आनेवाली है उसके सब चिह्न प्रत्यक्ष दिखाई दे रहे हैं॥

कंचु०—(घबड़ाकर) यह तुमने क्या कहा, इस श्रेष्ठ कुलपर बहुत बड़ी विपत्ति आने वाली है, यह तुमने कैसे जाना ?

द्वार०—राजा दुर्योधन और शकुननि मिलकर यह सलाह की है कि महाराज युधिष्ठिर यहां बुलाये जांय और उनके साथ जूआ खेलकर उनकी सब लक्ष्मी और राज पाटको छीनलें हमारे स्वामीनेभी राजादुर्योधनके हठसे शकुनीकी इस सलाहको मान लिया है और विदुरजीको पांडवों के बुलाने को इन्द्रप्रस्थ भेजा है वह पांचों वीर यहां जूआ खेलने को बुलाये गये हैं इस दुष्ट शकुनीकी कुमतिसे अवश्य इस कुलका नाश होगा वह जूआ खेलने में बहुत बड़ा गुणी है और कपट के पांसोंसि खेलता है महाराज युधिष्ठिर सीधे और धर्मस्वरूप हैं भला वह कब उस कपटीके बराबर खेल सकते हैं सो हार तो उनकी अवश्य होगी और जब निर्धन और राजहीन होकर पांचो वीर देशके बाहर किये जांयगे तब उनकी क्रोध की आग भड़ककर इस कुरुकुल को ऐसे भस्म करैगी जैसे दावानल सारे जंगल को जला देता है इन सब बातोंके चिह्न मुझे प्रत्यक्ष दिखाई दे रहे हैं ॥

कंचु०—हाय ! परमेश्वर ने मुझे इतनी बड़ी आयु क्यों दी राजा प्रतीपसे लेकर राजा धृतराष्ट्रतक मैंने इस श्रेष्ठ कुलके राजाओंकी सेवा की है, मैंने तो सदा संपत्तिही देखी है अब मैं कैसे इस विपत्तिको अपनी आंखोंसे देखूंगा, हे विधाता ! तू इस कुलको आपुसके विरोधसे बचा और सबोंको ऐसी मति दे जिससे इस कुलका नाश न हो ॥

द्वार०—अब चुपरहो किसकि रथके आनेकी आहट सुनाई देती

है (आंख उठा कर) लो वह पांचों पांडव वीर सामने रथसे उतर कर इधरही को आरहे हैं ॥

कंचु०-तो क्या वह श्रेष्ठ वीर आही पहुँचे ?

(राजा युधिष्ठिर भीम अर्जुन नकुल सहदेव का प्रवेश)

कंचुकी-(झुक कर) महाराज की जय हो ॥

युधि०-क्यों मैत्रेय तुम कुशलसे तो हो ?

कंचुकी-कुशल राजाओं की चाहिये राजाओंकी कुशल होने पर हम दासोंकी सदा कुशलही है ॥

युधि०-बड़े महाराज कहां विराजमान हैं ॥

कंचुकी-अन्तःपुरमें महारानी गांधारी जीके साथ कुछ बातें करते हुए बैठे हैं ॥

(पांचो भाई अन्तःपुरमें प्रवेश करते हैं और परदा गिरता है)

दूसरा गर्भाङ्क ।

राजा धृतराष्ट्रका रनवास ।

(राजा धृतराष्ट्र और रानी गांधारी दोनों एक आसन पर बैठे हुए हैं गांधारी की आखोंसे पट्टी बँधी हुईहै और पांचो पांडव उनके सामने विराजमान हैं)

धृत०-(युधिष्ठिरसे) पुत्र! अच्छे तौ रहे तुम कुशलसे तौ हो?

गांधा०-बच्चा तुम सब अच्छे तौ रहे? धन्य है कुंतीकी कोख जिसमें तुम ऐसे सुपुत्रोंने जन्म लिया तुम ऐसे शीलवान् यशवान् और गुणवान् पुत्रोंको पाकर कुंतीकी सब मनोकामना सिद्ध हुई, तुम सदा अपने गुरुजनोंके कहनेमें हो और भली विधिसे उनकी सेवा करते हौ सब देवी देवता सदा तुम्हारी रक्षा करैं ॥

युधि०--हम सब कुशलसे हैं और माता पिताके दर्शनोंकी हमें बहुत बड़ी अभिलाषाथी वह अभिलाषा अब हमारी पूरी हुई ॥

धृत०--धन्य कौरव कुल जिसमें तुम ऐसे पुत्र और यशवान् राजा उत्पन्न हुए तुम्हारे कारण इस श्रेष्ठ कुलको बहुत बड़ी बड़ाई मिली यह साम्राज पद तुमहीको सोहता है ॥

युधि०--यह सब गुरुजनोंके आशीर्वादका फल है हम सब आपकी आज्ञाको मान्ना अपना परमधर्म समझते हैं ॥

धृत०--हे पुत्र! तुम्हारे भाई दुर्योधन को भी यह अभिलाषा हुई है कि, जैसे तुमने इन्द्रप्रस्थमें उसकी पहुनाई की वैसेही वह भी तुम्हारी पहुनाई यहां करे इसीसे उसने भी एक सभा तैयार कराई है जिसको तुम कल देखोगे वह चाहता है कि सब भाई एक जगह इकट्ठे होकर अपने मन बहलाउ की बातें करें अब तुम अपने ठैरनेके स्थानमें जाकर विश्राम करो तुम थकगये होगे ॥

युधि०--जो आज्ञा, अब हम सब महाराजसे विदा होते हैं।

(पांचो भाई जाते हैं)

गांधा०--आर्यपुत्र!बड़े शोककी बात है कि, हमारा पुत्र दुर्योधन ऐसे शीलवान् और गुणवान् पुरुषसे जैसा कि, युधिष्ठिर है विरोध रखता है यह जो जूआ खेलनेका विचार उसने किया है वह मुझे नहीं भाता है मेरे भाई शकुनीने कुमतिसे उसको ऐसी सलाहदी है, है तो वह मेरा भाई परन्तु मैं उसको अच्छा नहीं समझती हूं तुम इस शकुनी-को उसके घरको विदाकरदो और दुर्योधनको फिर समझाओ कि, तू पांडवोंसे विरोध मत रख ॥

धृत०-हे मेरी प्रिया! मैं क्या करूं मेरा कोई वश नहीं चलता दुर्योधन को मैंने बहुत समझाया विदुरजीने भी उसे बहुत समझाया परन्तु उसने हमारे कहने को नहीं सुना वह तो प्राणोंके त्यागने पर उतरा हुआ है पुत्रके मोहसे मैं उससे अधिक नहीं बोल सकता हूं ॥

गांधा०-हाय! मैं अभागिनी क्या उपाय करूं मैंभी उसको समझाकर थकगई, हे आर्यपुत्र! इस संसारमें सब मनुष्य अपने अपने कर्मोंके फलसे सुख और दुःख भोगते हैं जहां धर्म नहीं है वहां सदा विपत्तिका भय रहता है और मैं तो पहिले भी कह चुकीहूं कि, विजय उधर होगी जिधर धर्म होगा मेरे पुत्र तो धर्मके मार्ग पर नहीं चलते हैं और युधिष्ठिरको सदा धर्मही प्रिय है जब यह हाल है तो मेरे पुत्र कैसे विजयकी आशा रख सकते हैं ॥

धृत०-होनहार बलवान् है होनहार के वश दुर्योधनकी ऐसी मति हुई है और होनहारके वश मैंने भी उसकी सलाह मानली है होनी होकर रहैगी तुम्हारा शोक वृथा है ॥

(प्रातिकामीका प्रवेश)

प्राति०-महाराजकी जयहो, राजा दुर्योधन ने मुझे यह आज्ञा दी है कि, प्रातिकामी तू महाराजसे पूंछकर सब राजाओं को कल सभामें आनेका न्योता देआ और पांचों पांडवों कोभी आनेके लिये कह आ कल जुआ खेलनेके लिये मुहूर्त्त अच्छा है सो महाराजकी क्या आज्ञा है ?

धृत०-अच्छा तू हमारी ओरसे सब राजाओं को कल दो पहर दिन चढ़े सभा में आनेकेलिये न्योता दे आ और हम भी विदुर जी के साथ वहां आवेंगे ॥

प्राति०-जो आज्ञा ॥

(बाहर जाता है और परदा गिरता है)

तीसरा गर्भांक।

स्थान हस्तिनापुर राजमार्ग।

(प्रातिकामी दुर्योधन के सारथी का बेटा जाता हुआ दिखाई देता है)

प्राति०-(आपही आप) हमारे महाराजने पांडवों को कपट से जीतने का जो विचार किया है वह ठीक नहीं है इसमें बहुत बड़ी हानि होगी परन्तु हम सेवकों को उससे क्या, हमारी बात और हमारी सलाह को राजा लोग कब मान्ने वाले हैं हम तौ उनके आज्ञाकारी सेवक हैं जैसी आज्ञा हमें वह दें वैसाही हमें करना चाहिये सो महाराजकी आज्ञाके अनुसार मैंने सभा को अच्छीतरह सजा दिया है और वह अब नानाप्रकार के भूषणों और रत्नों से जग मगा रही है और थोड़ेही काल में राजाओं के इकट्ठे होने से वह सभा राजा इन्द्र की सभा के समान शोभायमान होगी (सामने संजय को आते हुए देखकर) आर्य संजय! मैं आप को प्रणाम करता हूं आप कहां से आरहे हैं?

संजय०-मैं महाराजा धृतराष्ट्र को सभा में पहुँचाकर आ रहा हूं और राजा दुर्योधन की आज्ञा से मैं तुम्हें ढूंढ़ने को आया हूं वह तुमको बुलाते हैं॥

प्राति-०मैं महाराजही के पास जा रहा हूं परन्तु हे आर्य! यह तो कहो सब राजा सभा में आगये कि नहीं?

सं०-हां, सब आगये॥

प्राति०-कौन कौन आये हैं?

सं०-कौरवकुल के सब राजा वहां इकट्ठे हैं श्रीमन्महाराज भीष्मपितामह श्रीमन्महाराज बाह्लीक और उनके पुत्र

सोमदत्त और श्रीमन्महाराज धृतराष्ट्र और उनके पुत्र राजा दुर्योधन राजा दुश्शासन इत्यादिक और श्रीमन्महाराज युधिष्ठिर और उनके चारों भाई ये सब वहाँ विराजमान हैं॥

प्राति०—इनके सिवाय और कौन कौन वहां आये हैं?

सं०—गांधारका राजा शकुनी अपने भाइयोंके साथ वहां विराजमान है राधाका पुत्र कर्ण जिसको अपने पराक्रम और वीरताका बहुत घमंड है वहां विराजमान है इनके सिवाय और दूसरे बहुतसे राजा वहां इकट्ठे हुये हैं॥

प्राति०—राजाओंके सिवाय कोई और भी वहां आये हैं?

सं०—हां कौरवों और पांडवोंके श्रेष्ठ गुरु द्रोणाचार्य्य और कृपाचार्य्यजी भी वहां विराजमान हैं और श्रीमन्महाज्ञानी और पंडित मंत्री विदुरजी महाराजा धृतराष्ट्रके समीप बैठे हुए हैं॥

प्राति०—तो जिन जिनको मैं कल न्योता दे आयाथा वह सब आगये हैं अब वहां क्या हो रहा है॥

सं०—सब राजा विराजमान हैं और सभाके बीचमें चौपड़ और पांसे रक्खे हुए हैं और वह अनहितकी जड़ और पापका मूल जूआ होनेवाला है राजा दुर्योधनकी तरफसे गांधारके राजा शकुनी खेलेंगे और वह कपटके पांसोंसे धर्मशील और सीधे स्वभाववाले महाराज युधिष्ठिरको निश्चय जीत लेंगे॥

प्राति०—तो अब हमभी वहां चलें॥

(दोनों जाते हैं)

द्रौ०—तुम्हें भली हँसी सूझी है यहां तो प्राणोंपर बन रही है तुमतो अपने भोले स्वभावसे इस जूएको बच्चोंका जूआ समझेहुएहो मैं डरती हूं कहीं ऐसा न हो कि हम तुम सब जो एकही कुलकी बहू बेटियां हैं एक दूसरे की वैरिन बन जांय ॥

दुः०—हे मेरी अच्छी भाबी ! तुम बताओ क्या यह सच मुच का जूआ है ? मैं तो इसको मनके बहलाने का जूआ समझे हुए हूं ॥

द्रौ०—यह तुम अपनी इन्हीं भाबीसे पूंछो यह तो भलीभांति जानती होंगी ॥

भानु०—मैं क्या जानूं क्या कोई मुझसे पूंछकर कोई काम करता है मैं क्या किसीकी सलाह में हूं ॥

द्रौ०—अच्छी कही राजाकी पटरानी होकर तुम ऐसा कहतीहो॥

भानु०—तो क्या तुमसे सब कुछ पूंछकरही करते हैं ?

द्रौ०—पूंछकर तो नहीं करते हैं परन्तु सदाकी पास रहने वालीसे क्या कोई बात छुप सकती है ?

दुः०—इतना तो मैं भी कहती हूं कि, यह हमारे राजा को एक क्षण भी नहीं छोड़ती हैं और जो कभी राजा धोखे से भी किसी दूसरी स्त्री को देखलें तो बस यह लाल तत्ती तो होही जाती हैं इनका ऐसा स्वभाव है वह इन के डरके मारे जब अंतःपुर में आते हैं तो किसी को आंख उठाकर भी नहीं देखते हैं ॥

भानु०—जो तुम को यही जलन है कि, आर्य पुत्र मुझे छोड़कर तुमको नहीं देखते हैं तो लो मैं कुछ बुरा न मानूंगी जो सदा तुम्हारे ही मुखको चकोर और चन्द्रमा की नांई करें ॥

द्रौ०–(दुःशलासे) यह तुम्हारी भावी ठीक तो कहती हैं तुम इनके साथ जगह बदल लो फिर तुम कहे को गीला करोगी और मैं समझती हूं राजा जयद्रथ भी इन रानी भानुमती को पाकर अप्रसन्न न होंगे ॥

दुः०–(लज्जित होकर भानुमती से) तुम मुझसे हँसी न करो जब मैं हँसी करूंगी तौ तुम तिनगिनाकर भागौगी ॥

द्रौ०–(भानुमती से) अब बताओ तुमने इससमय मेरे ऊपर कैसे कृपाकी ॥

भानु०–महारानी गांधारी जी आज बहुत बड़ा उत्सव करेंगी वह यह चाहती हैं कि, सब बहू बेटियां इस कुल की इकट्ठी हों, जाने फिर ऐसा समय हाथ आवे अथवा न आवे ॥

द्रौ०–महारानी जी की आज्ञा शिर माथे, परन्तु यह सब बातें दैवाधीन हैं ॥

भानु०–अच्छा तौ हम जाती हैं ॥

(भानुमती और दुःशला दोनों जाती हैं)

द्रौ०–हे सखी मदनमोहिनी ! मेरा चित्त इस समय बहुत व्याकुल हो रहा है और मुझे ऐसा जान पड़ता है कि, दुःख की कोई बात अवश्य होनेवाली है मेरी दांई आंख बराबर फड़क रही है यह बुरा शकुन है ॥

मद०–महारानीजी अपने चित्तको संभालिये घबड़ानेकी [illegible] बात नहीं है ॥

(नेपथ्यमें हाहाकार शब्द होता है)

द्रौ०–हे मदनमोहिनी ! बाहर यह कैसा हाहाका[illegible] रहा है मुझे जान पड़ता है कि, कोई बात [illegible] श्य हुई है ॥

चौथा गर्भांक।

स्थान हस्तिनापुर पांडवोंका रनवास।

(द्रौपदी और मदनमोहिनी बैठीहुई दिखाई देती हैं)

द्रौ०—हे सखी! मदनमोहिनी! सभाके बीचमें कौरवोंने आर्यपुत्रके साथ जो जूआ रचा है उससे मेरे हृदयमें बड़ी बेचैनी होरही है मैं समझती हूं महामुनि श्रीव्यासजी के बचनोंके सच्चे होनेका अब समय आ पहुँचा है होनहार के वश होकर आर्यपुत्रने कौरवोंके साथ जूआ खेलना अंगीकार किया है होनहार कभी नहीं टलती है!!

मद०—महारानीजी! आप कुछ चिन्ता न करें जहां बड़े महाराज श्रीमन्त राजा धृतराष्ट्रजी और सबके पुरखा श्रीमन्त भीष्मजी विराजमान हैं वहां कोई बात बिगाड़की न होने पावेगी॥

द्रौ०—अरी मदनमोहिनी! तुझे कुछ खबर नहीं वह पापी दुर्योधन कभी किसीकी नहीं सुन्नेवाला है बड़ोंके कहनेको जो वह ऐसाही मानता होता तो जो दुःख हमने कौरवों के हाथसे सहे हैं वह क्यों सहने पड़ते?

मद०—यह तो मैंने भी यहां आकर रानी भानुमतीकी एक सखीके मुँहसे सुना है कि, राजा दुर्योधनको हमारे स्वामी की संपत्तिको देखकर बड़ा शोक हुआ है उस सखीने मुझसे यह गुप्त बातभी कहीथी कि, राजा दुर्योधन रानी भानुमतीको तुम्हारा ऐश्वर्य्य देखकर बड़ी डाह जबसे तुम यहां आई हो उस रानीने अच्छीतरह

भोजनभी नहीं किया है और मैं अपने कानोंसे सुनती हूं कौरवोंकी सब रानियोंमें तुम्हारा चरचा होता है वह सब तुम्हारे वैभवको देखकर जलती हैं ॥

द्रौ०—यह सब झूंठा रोना है यह चंचल लक्ष्मी किसका साथ देती है आज मेरे घर है तो कल दूसरेके घर, इसको पाकर फूलना और दूसरेके यहां इसको देखकर कुढ़ना वृथा है मैं सच कहती हूं, हे सखी! मैं कभी अपनी लक्ष्मीपर गर्वित नहीं होती हूं जो कुछ है वह सब ईश्वरका दिया हुआ है जबतक वह चाहैगा यह धन और द्रव्य और राजपाट हमारे पास रहैगा और नहीं तो इसी समय इसी जूएके द्वारा पराये आधीन हो जायगा इसका एकक्षण काभी भरोसा नहीं है ॥

मद०—महारानी जी! किसीकी पैचल सुनाई देती है गहनों की झंकारसे ऐसा जान पड़ताहै कि, कोई राजवधू इधर आरही हैं (दृष्टि उठाकर) हाँ, मैंने जाना यह तो राजा दुर्योधन की रानी भानुमती आपही आरही हैं और उनके साथ उनकी ननद दुःशला हैं ॥

(भानुमती और दुःशलाका प्रवेश)

दुः०—(द्रौपदीसे) हे रानी पांचाली! इस समय रानी भानुमती से मैं यह कहरहीथी कि, क्या अच्छा हो जो हमारे भाई जूए में अपनी अपनी रानियों को दांवपर लगायें यदि बड़े भाई दांवको जीतें तो इनको एककी जगह पांच मिलैंगे और लाभमें रहेंगी और जो छोटे भाई जीत जांय तो तु[illegible] को पांचकी जगह एकही मिलैगा और तुम हानिमें [illegible] अब मैं तुम दोनोंसे यह पूंछती हूं क्या तुम इ[illegible] पलट को पसंद करती हो?

(नेपथ्यमें)

हा धिक्! हा धिक्!! बड़े शोककी बात है यह बहुत बड़ी अनुचित बात हुई ॥

द्रौ०—क्या बड़ी अनुचित बात हुई? देख तो मदनमोहिनी यह कौन बोल रहा है ॥

(मदनमोहिनी बाहर जाती है और प्रातिकामीके साथ फिर आती है)

मद०—यह प्रातिकामी ड्योढ़ीके रक्षकोंसे कुछ कह रहेथे जिसको सुनकर ड्योढ़ीवालेंने हाहाकार किया इन्होंने कोई अनहित बात उनसे कही है और यह तुमसे कुछ संदेसा कहनेको आये हैं ॥

द्रौ०—(प्रातिकामीसे) अच्छा कह क्या तू आर्यपुत्रका कोई संदेशा लाया है ?

प्राति०—नहीं, मुझे राजा दुर्योधनने भेजा है और यह कहा है कि, तू द्रौपदीको बुलाला सो मैं तुम्हें बुलानेको आयाहूं ॥

द्रौ०—(घबड़ाकर) क्यों ? राजा दुर्योधन मुझे क्यों बुलाते हैं आर्यपुत्र कहां हैं वह पांचों वीर कहां हैं क्या उनपर कोई भारी संकट तो नहीं पड़ा है? हे प्रातिकामी ! तू सच सच बता वह पांचों भाई कहां हैं और उनकी क्या दशा है ॥

प्राति०—हे रानी! राजा युधिष्ठिर जुएके मदमें मतवाले होरहे हैं वह तुमको हार गये हैं और राजा दुर्योधनने तुमको जीता है सो वह तुमको अपनी दासी समझकर बुलाते हैं मैं जानताहूं कि, अब कौरवोंके नाश होनेका समय आगया है राजा दुर्योधन अब अपनी भलाई नहीं चाहते हैं इसी कारण वह तुमको सभामें बुलाते हैं ॥

(यह सुनकर द्रौपदी अचेत हो जाती है और मदन-मोहिनी मुँहपर पानी छिड़कती है)

मद०—महारानीजी सावधान हो सावधान हो ॥

द्रौ०—(चेतन होकर) दुःशलाने तो हँसीहीमें कहाथा परन्तु उसका कहना सच्चाही होगया (आंखोंमें आंशू भरकर) हाय! मैं दुर्भागिनी मैं महाराधिराज राजा द्रुपदकी बेटी और शूरवीर धृष्टद्युम्नकी बहिन और भरतखंडके सब राजाओंके राजा महाराजा युधिष्ठिरकी पटरानी अब दासीकी दशाको प्राप्त हुई इससे बढ़कर और भारीदुःख क्या होगा, हाय! मैं अब कैसे इस दुःखको सहूंगी, परन्तु हे मदनमोहिनी! मुझे एक बड़ा अचरज होताहै कि, आर्यपुत्र मुझ ऐसी अपनी प्यारी रानीको कैसे जूएमें हारगये, क्या उनके पास और कुछ धन जूआ खेलनेको न रहा (प्रातिकामीसे) हे प्रातिकामी! इस संसारमें ऐसा कौन राजपुत्र होगा जो जूएके मदमें मतवाला होकर स्त्रीरूप धनसे जूआ खेलैगा तू क्या बकरहा है क्या आर्यपुत्रके पास जूआ खेलनेको और कुछ धन न था?

प्राति०—हेरानी! जैसे वह जूआ हुआ उसका संक्षेप वृत्तान्त तुम मुझसे सावधान होकर सुनो ॥

चोपाई।

सभा बीच सब राजा आये । कुरुकुल भूषण सबहिं सुहाये ॥
होन लगी चौसरतिहि काला । लागे खेलन धर्म भुआला ॥
काढ़ि कंठते गजमणि माला । सो धरिदीन्ह धर्म महिपाला ॥
शकुनी पांसे कपट सम्हारे । कहत परत सोइ बिनहि बिचारे॥
होत जीत कुरुनायक केरी । हारे धर्म द्रव्य बहुतेरी ॥

रहे जे धर्म कोष गम्भीरा। जीति लिये मुक्तामणि हीरा ॥
मोती रतन जवाहिर जेता। मूंगा कंचन कोश समेता ॥
शकुनी कपट अक्ष बलजीते। चित भ्रम धर्म भये सुख बीते ॥
तरुणी दासी लक्ष शुमारा। रूप भरी पहिरे मणि हारा ॥
दास समूह चतुर बहुतेरे। पहिरे भूषण बसन घनेरे ॥
सो धन धर्म दांव धरि दन्हिा। सकल जीति कुरुनायक लीन्हा॥
पराहिं न धर्मराजाके पांसे। चकित लोग सब देख तमासे ॥
बाढ़ेउ रोष धर्म नृप अंगा। धरेउ भूप तब दल चतुरंगा ॥
तब शकुनी छल अक्ष चलाये। जीति सकल दल कुरुमन भाये ॥
धरेउ धर्म महिषी गण गाई। जीते शकुनी अक्ष चलाई ॥
हारे रथ शिविका सुखपाला। उष्ट्र महिषी शकट विशाला ॥
इहि विधि धर्मराज धरि बाजी। हारे सकल तुरंगम ताजी ॥
हारे धर्मराज गज सर्वा। शकुनी जीति लिये सह गर्वा ॥
चकित लोग सब देख तमासा। कहैं न परत धर्म सुत पांसा ॥
करते शकुनि अक्ष जब डारैं। धर्म हारि सब लोग पुकारैं ॥
घोर भई तहँ पंसा सारी। इहि विधि गये धर्मसुत हारी ॥

द्रौ०—हे प्रातिकामी! इसके उपरान्त फिर क्या हुआ?

प्राति०—फिर शकुनी की प्रेरणासे राजा युधिष्ठिरने अपने प्यारे भाइयों को दांवपर रख दिया॥

चौपाई।

धरेउ धर्मराजा सहदेऊ। शकुनी जीते छल बल तेऊ ॥
धन अरु द्रव्य सहित धरि दीन्हा। नकुल जीति कुरुनायक लीन्हा
कुरुपति जीति धनंजय पाये। परमानन्द निशान बजाये ॥
बहुरि भूप युत सकल भंडारा। हारे भीम सहित परिवारा ॥

द्रौ०—अपने भाइयोंको हारकर फिर महाराज ने क्या किया?

प्राति०—फिर वह अपने आपको दांवपर रखने की इच्छासे यह बोले ॥

जयकरीछंद ।

सकल भ्रातन को प्रिय तौन । हारी छिन में सरवश जौन ॥
धरत आपको दांव अनूप । अक्ष फेंकिये सौवल भूप ॥

यह सुनते ही शकुनीने पांसे फेंक कर यह कहा किमैं जीता ॥

चौपाई ।

दीन्हे शकुनी अक्ष उलारी । किंकर भये धर्म सुत हारी ॥
छूटि राज्यपद दास कहाये । भये अचेत रहे शिर नाये ॥

द्रौ०—इसके उपरान्त आर्यपुत्रने मुझ अभागिनीको दांवपर रखकर हार दिया ॥

प्राति०—हां फिर उन्होंने राजा दुर्योधन और शकुनीकी प्रेरणासे तुमको दांवपर रखकर हार दिया ॥

द्रौ०—(रोकर) हाय! मुझे अकेलीको नहीं, अपने समेत सब भाइयोंको हारगये! जो राजपुत्र पहिले सम्पूर्ण राजके भोगोंको पाकर तृप्त होतेथे वह अब दासोंकी दशाको प्राप्त होकर इस घोर दुःखको कैसे सहैंगे? हाय! विधाता की यह बड़ी विपरीत गति है, मैंने जो देवपूजन नेम और व्रत इत्यादिक इस विपत्तिके निवारणके हेतु कियेथे वह सब हाय विपरीत भाग्यके कारण निष्फल हुये, हाय! यह कैसी भारी विथा पड़ी है इससे उद्धार होना अब बहुत कठिन है परन्तु मुझे भी इस समय सावधान होकर कुछ उपाय करना उचित है (प्रातिकामीसे) हे प्रातिकामी! तू कहता है कि महाराजने पहिले अपनेको और पीछे मुझे हारा है सो मैं तुझसे कहतीहूं कि, तू सभांमें

जाकर सब नीति जाननेवाले और गुणवान् सभामें बैठे हुये पुरुषोंसे यह कहदे कि, कौरवोंको अपना धर्म छोड़ना उचित नहीं है मुझे निश्चय करके ठीक ठीक इस बातका उत्तर दें कि, मैं धर्मसे जीती गई हूं अथवा नहीं, हे प्रातिकामी! मूर्ख और पंडित सब पर दुःख और सुख दोनों पड़ते हैं परन्तु संसारमें धर्म बड़ा श्रेष्ठ है मुझे निश्चय है मेरा धर्मही मेरी रक्षा करैगा॥

प्राति०–अच्छा मैं जाकर तुम्हारी ओरसे सभामें बैठेहुए सब राजाओंसे यह प्रश्न करताहूं॥

(प्रातिकामी जाता है)

मद०मो०–देवी सावधान हो अपने चित्त को संभालो विपत्ति तौ कठिन है परन्तु उसका हरनेवाला परमेश्वर है मुझे भरोसा है भगवान् श्रीकृष्णजी तुम्हारे संकट को दूर करैंगे तुम उन्हीं का ध्यान करो॥

द्रौ०–मुझे सदा उन्हीं भगवान्‌का ध्यान है मदनमोहिनी मुझे उनका बड़ा भरोसा है वह अवश्य मेरी लाज रक्खेंगे और हम सबको इस महाकष्टसे निकालेंगे देख तो मेरे भाग्यने यह कैसा पलटा खाया है अभी बहुत दिन नहीं हुए इन्द्रप्रस्थमें आर्यपुत्रके साथ मेरा अभिषेक बड़े बड़े ऋषियों और मुनियोंने पवित्र नदियोंके मंत्रित जलसे किया था मैंने अपने सामने लाखों ब्राह्मणोंको सोनेके पात्रोंमें जिवाया और उनको अपने हाथसे स्वर्ण और रत्नोंकी दक्षिणादीं और अब मैं आप दासीके भावको प्राप्त होकर दूसरोंकी आश्रित रहूंगी। परन्तु हे मदनमोहिनी! मुझे इस समय अपनी विपत्तिका इतना सोच नहीं है जितना सोच मुझे

इस बातका है कि, आर्यपुत्र अब कैसे दासोंकी दशाको प्राप्त होकर दुःखको सहैंगे कहां तो वह रत्नोंसे जड़ा हुआ सोनेका सिंहासन था और कहां अब वह सेवकोंके समान धरतीपर बैठेंगे कहां वह सभा जिसमें राजालोग उनको घेरे बैठे रहतेथे और कहां अब वह आप दास होकर राजाओंकी सेवा करैंगे यह देखकर मेरे मनका दुःख क्यों कर शान्त होगा? कहां उनके शरीरपर चन्दन लगा हुआ होताथा और सुन्दर रेशमी वस्त्रों और नाना प्रकारके अलंकारोंसे वह शोभायमान होताथा और कहां अब उनको मैले कुचैले उतरेहुए कपड़े दासोंकेसे पहिनने पड़ेंगे यह देखकर मेरे मनका दुःख क्योंकर शान्त होगा पहिले उनके घरमें नानाप्रकारके बनेहुए भोग सोनेके बरतनोंमें ब्रह्मचारी गृहस्थी और संन्यासी ब्राह्मणोंको बँटतेथे अब वह आप दूसरोंके दिये हुए भोजनको कनिष्ठ बरतनोंमें नीच लोगोंकी तरह पांयेंगे यह देखकर मेरे मनका दुःख क्योंकर शान्त होगा॥

मद०मो०—महारानीजी सावधान हो सावधान हो॥

(नेपथ्यमें कलकल)

द्रौ०—(सुनकर और घबड़ाकर) यह क्या कलकल बाहर हो रहा है, मदनमोहिनी! इस समय सारे शकुन बुरे हो रहे हैं मैं समझती हूं मेरा अंतकाल आपहुँचा, हाय! मैं अपने प्यारे स्वामियों और अपने प्यारे पुत्रोंसे भेट करने पाऊंगी अथवा नहीं, हे सखी! मैं अपने पातिव्रतधर्मकी रक्षाके हेतु अपने प्राण अवश्य त्यागूंगी, ले मदन मोहिनी! मैं तुझसे भी बिदा होती हूं॥

मद०मो०—महारानी जी ऐसी अशुभ बात मुखपर न लाओ तुम युग युग जियो और फलो फूलो तुम्हारा अहिवात अचल रहै ॥

(नेपथ्य में)

अरे मूढ़ भृत्यगणो! अलग हटो दूर हो मुझे मत रोको तुम मुझे नहीं जानते हो मैं कौन हूं मैं छत्रपति महाराजाधिराज श्रीयुत राजा दुर्योधनका छोटा भाई दुश्शासन हूं और महाराजकी आज्ञा से पांडवोंकी पूर्वरानी और वर्तमान हमारे महाराजकी दासी द्रौपदीको सभामें ले जाने को आयाहूं तुम मुझे मत रोको और भीतर जाने दो ॥

मद०मो०—महारानी जी ऐसा जान पड़ता है कि, राजकुमार दुःशासन आप तुम्हें बुलाने को आये हैं ॥

द्रौ०—हाय! मैं दुखिया अब इस समय किसका आसरा ढूंढूं पांच अतुल वीरोंकी पत्नी होकर मैं इस समय कैसी दीन दशा को प्राप्त हो रही हूं !

मद०मो०—हे देवि! तुम महारानी गांधारीजीके पास शीघ्र चली जाओ वह अवश्य तुम्हारी रक्षा करेंगी ॥

(क्रोध भराहुआ दुःशासन का प्रवेश।

दुः०—(द्रौपदीसे) हे पांचाली हे कृष्णा! तुझ को राजा दुर्योधन ने जूएमें जीता है और धर्म से पाया है अब तू लज्जा छोड़ कर उन के पास चल और कौरवों की सेवा कर ॥

(यह सुन कर द्रौपदी बहुत दुःखी होकर अपने मुँह को हाथों से ढांपकर रोती हुई राजा धृतराष्ट्र के रनवास की तरफ को भागती है और दुःशासन उसके पीछे गरजता हुआ दौड़ता है और द्रौपदी के बालों को पकड़ के खैंचता है और उसको खैंचता हुआ सभाकी तरफ को ले चलता है पीछे पीछे मदनमोहनी रोतीहुई दौड़ती है)

मद०मो०-(दुःशासन को द्रौपदी के बालों को खैंचते हुए देख कर) देखो, ईश्वरकी क्या विलक्षण गति है जो केश राजसूय यज्ञ में मंत्रों के जल से सींचे गये थे उन्ही को यह दुष्ट दुःशासन पांडवों के पराक्रम को कुछ न समझ कर मरोड़ रहा है, हाय! हमारी महारानी को इस दुष्ट के हाथ से छुड़ानेवाला कोई नहीं है जाऊं महारानी गांधारी जी से यह सब हाल कहूं॥

(जाती है और परदा गिरता है)

पांचवां गर्भांक।

स्थान हस्तिनापुर कौरवोंकी सभा।

(भीष्म पितामह बाह्लीक धृतराष्ट्र दुर्योधन विकर्ण कर्ण शकुनी द्रोणाचार्य विदुर इत्यादिक और पांचों पाण्डव युधिष्ठिर भीमसेन अर्जुन नकुल सहदेव सब अपने अपने आसनों पर बैठे हुए हैं सभा के बीचमें चौपड़ बिछी हुई है और पांसे और गोटें फैली हुई पड़ी हैं पांचों पांडव शिर झुकाये हुए श्वास लेते हुए बैठे हैं)

दुर्यो०-(शकुनीसे) हे मामा! यह कौन कह सकता है कि हमने द्रौपदी को धर्म से नहीं जीता है इन सब राजाओंके सामने युधिष्ठिर ने उसको दांवपर लगाया और आपने पांसा डालकर उसको जीता! फिर द्रौपदीका प्रश्न वृथा है॥

शकु०-तुम सच कहते हो हमने उसको धर्म से जीता है वैसे ही जैसे हमने और सब धन जीता है॥

द्रोणा०-धर्म की गति बड़ी सूक्ष्म है इसका निर्णय बहुत कठिन है जब युधिष्ठिर पाहिले अपने को हार गये और पीछे उन्हों ने द्रौपदी को दांवपर लगाया तौ मुझे आपके जीतने में सन्देह है॥

भीम०–आचार्य्यजी आपने सच कहा है इसका निर्णय करना बहुत कठिन है ॥

(दुःशासन द्रौपदीके बालों को पकड़े हुए खैंचता हुआ सभा के द्वार में से प्रवेश करता है और द्रौपदी रोती हुई आतीहै सब सभासद राजा उसकी तरफ देखते हैं)

द्रौ०–(दुःशासन से) अरे मंदबुद्धि! अरे नीच !! मैं इस समय एक वस्त्र ही पहिरे हुए हूं ऐसी दशा में अपने बड़ोंके सामने नहीं हो सकती हूं ॥

चौपाई।

अरे नीति मग देखु विचारी । कैसे जाय सभामहँ नारी ॥
मैं रज श्रवत एक पट धारी। सभा गये पत जाय हमारी ॥
भीष्मादिक छत्री बहु राजा ।जात सभा महँ त्रिय कहँ लाजा॥

दुः०–तू तो अब हमारी दासी है तुझे मैं ऐसी ही दशा में राजा के सामने ले जाऊंगा ॥

चौपाई।

सुनरी हार गये पति तेरे । मानु वचन अब कुरुपति केरे ॥
दासी भई रही नहिं रानी। सेवहु कुरुपति निजपति जानी ॥

(द्रौपदीकी साड़ीको खैंचता है)

द्रौ०–अरे निर्दई! अरे नीच! मुझे नंगी क्यों करता है?हाय! इन कौरवोंमेंसे कोई इस दुष्टको नहीं रोकता है, देखो! वह इस अधर्म और मर्य्यादारहित कामको देख रहे हैं निश्चय करके अब इन सब भरतवासियों का धर्म और चलन नष्ट होगया है, हाय ! मुझे इससे पहिले राजाओं ने केवल स्वयम्वरमें ही देखाथा अब मैं सभा में सबके सामने इस दशामें खड़ी हुई हूं ॥

चौपाई।

दीख स्वयम्वर एकहिं बारा। कै अब देखत सकल भुआरा॥
देखत मोहिं सभा सब कोई। सूर्य न दीख रही अस गोई॥
वायु सपर्श कदापि न कीन्हा। झपट केशकै खल यह लीन्हा॥
छूटे केश उघरि गयो चीरा। गई लाज मन रह्यो न धीरा॥
राज बधू मैं राज किशोरी। हाय! उचित नाहिं अस गति मोरी
बैठे सभा सकल व्रत धारी। कोउ न चहत छुड़ावन नारी॥
हाय! गई मति इन सब केरी। देखत हैं जो अस गति मेरी॥
सभा मध्य पति पांच हमारे। महावीर रण टरत न टारे॥
मोहिं उघारि होत ये देखैं। विधिवश हाय मौन ह्वै पेखैं॥

(द्रौपदी क्रोध भरी आखोंसे पांडवोंकी तरफ देखती है और सब पांडव कोपकी अग्निमें भड़क जाते हैं)

दुःशा०-(द्रौपदीसे) अरी दासी! अरी दासी!!

कर्ण०-धन्य है धन्य है दुःशासन!

(दुर्योधन कर्ण शकुनी इत्यादिक खिलखिलाकर हँसते हैं

विदुर-(खड़े होकर क्रोधसे)

चौपाई।

धिक धिक हे दुर्योधन राजा। आवत तोहिं नहीं कछु लाजा॥
पतित भयो तू हे अज्ञानी। समझत नाहिं निजलाभ न हानी॥
अरे द्यूत मदसे मतवाला। भूला है तू यमके जाला॥
पुण्य शील द्रौपदी पियारी। दासी योग न राज कुमारी॥
नारी भूषण कुरु कुल रानी। चन्द्रवंश शोभा गुण खानी॥
राज वधू राजाकी बेटी। पती बीरनकी नहिं हेटी॥
प्रेमसखी यदुनन्दन केरी। ध्यावत कृष्णहिं प्रीति घनेरी॥
चाहत जाहि सकल नर नारी। दासी योग न राज कुमारी॥

द्रौ०—हे कौरवो ! यह दुष्ट दुःशासन मुझे इस समय बड़ा क्लेश दे रहा है मैं उसके दिये हुए क्लेशको अब नहीं सह सकती हूं इससे तुम दोमेंसे एक बात कह दो कि मैं दासी हूं अथवा नहीं ॥

भीष्म०—(द्रौपदीसे) हे सुन्दरी ! इसमें सन्देह नहीं कि निर्धनी मनुष्य दूसरेके धनको जूएंमें दांवपर नहीं लगा सकता है परंतु स्त्रीको अपने पतिके वशमें समझ कर और धर्मकी सूक्ष्मताको विचार कर मैं तेरे प्रश्नका ठीकउत्तर नहीं दे सकता हूं, हां यह तो सब जानते हैं कि युधिष्ठिरने पहिले अपनेको हारा और पीछे तुझे हाराथा परन्तु मुझे यह विश्वास है कि युधिष्ठिर सब पृथ्वीको छोड़ देगा परंतु धर्मको नहीं छोड़ैगा ॥

द्रौ०—मेरा इस समय इन सब कौरवोंसे यही निवेदन है कि सब लोग विचारकर ठीक ठीक कहैं कि मैं धर्मसे जीती गई अथवा नहीं ॥

भीष्म—हे द्रौपदी ! मैं अभी कह चुका हूं कि धर्मकी गति बड़ी सूक्ष्म है उसको महात्मा लोग भी नहीं जानते हैं इस लोकमें बलवान् जिस धर्मको मानता है वही धर्म है और उस धर्मकी मर्य्यादा पर दूसरा चलने वाला अधर्म्मी गिना जाता है इससे मैं तेरे प्रश्नका यथोचित उत्तर नहीं दे सकता हूं ये कौरव लोभ और मोहके वशमें हो रहे हैं अब निश्चय इनका नाश होगा ॥

विकर्ण०—(खड़ा होकर) हे राजा लोगो ! जिस बातको यह द्रौपदी पूंछती है उसका ठीकठीक विचारकर स्पष्ट उत्तर दो नहीं तो पूंछे हुए प्रश्नका उत्तर जानबूझकर न देनेसे तुम

सब नरकगामी होंगे, हे राजाओ! तुम कहो चाहे न कहो मेरी समझ में जैसा आता है वह मैं कहताहूं पहिले तो युधिष्ठिर आप जूआ खेलने को नहीं आये इस खेल को उन्हें जूआरियों ने खेलने को बुलायाथा फिर पहिले वह अपने भाइयों और अपने को हारे और पीछे द्रौपदीको दांव पर लगाया इससे मेरी समझ में द्रौपदी नहीं जीती गई॥

(बैठ जाता है)

भीष्म०—धन्य है विकर्ण धन्य है!

द्रोण०—धन्य है धन्य है!

विदुर०—मैं तो अनेक बार कह चुका हूं कि द्रौपदी धर्मसे नहीं जीती गई॥

कर्ण०—हे विकर्ण! तू बड़ी विपरीत बात कहता है मैं जानता हूं कि जैसे आग काठसे पैदा होकर उसी काठको जलादेती है वैसेही तूभी जिस कुलमें उत्पन्न हुआ है उसीको नाश करना चाहता है तू अज्ञान बालक होकर क्यों निकला पड़ता है ये बड़ेबड़े लोग यहां बैठे हुए द्रौपदीको जीती हुई मानकर उसके पूंछनेपरभी कुछ नहीं कहते हैं, द्रौपदी अब हमारी दासी है शकुनीने इन सब पांडवों और द्रौपदी को सब धनसमेत धर्मसे जीता है इससे हे दुःशासन! तुम इन पांडवों और द्रौपदीके वस्त्रोंकोभी उतार लो॥

(यह सुनकर सब पांडव अपने २ वस्त्र उतारकर अलग रखदेते हैं और दुःशासन बल करकै द्रौपदीके वस्त्र को खैंचकर उसको नंगी करने लगता है)

द्रौ०—(श्रीकृष्णको स्मरण करके)

लावनी।

दीन दयालु पुरुषोत्तम माधव मेरी टेर सुनो स्वामी।
मैं बहुत दुखारी लाज लई दुष्ट हे अन्तर्यामी॥
तुम कर्त्ता सबके दुख हरता तुम हो सबके हितकारी।
मैं करूं विनती लाज अब मेरी राखो गिरिधारी॥
मो समान नहिं और दुखारी रटूं नाम तेरो बनवारी।
जहां जहां भीर पड़ी सन्तन पै लीन्ही खबर सवारी॥

दोहा–कुण्डलिया।

डूबत हूं दुख सिंधु में, शरण द्वारकानाथ।
त्राहि त्राहि सुध लीजिये, अब मैं भई अनाथ॥
हाय! हाय यदु नाथ हाय! गोवर्धन धारी।
हाय! हाय! बल बीर हाय! श्रीकुंज विहारी॥
शरण शरण सुख धाम शरण दुख भंजन स्वामी।
शरण शरण रक्षपाल शरण प्रभु अन्तर्यामी॥
शरण पड़ी मैं हारि कै शरणागत प्रतिपाल।
लज्जा राखो दास की दीनानाथ दयाल॥

चौपाई।

पांडव त्यागी सुद्धि हमारी। तुम नहिं त्यागहु गिरिवर धारी॥
परवश लाज जात हरि मेरी। त्रिभुवन नाथ शरण मैं तेरी॥
बीते काल दयानिधि ऐहौ। मोहिं उघारि देख पछितैहौ॥
ग्राह ग्रसे गज कीन पुकारा। तब तुम नाथ न लायहु बारा॥
ते तुम नाथ कहां गिरिधारी। यह पापी खैंचत मम सारी॥
सरबस हरेउ बचेउ इक बसना। सोऊ हरत बचावत कसना॥

(इसके उपरान्त एक भारी शब्द होता है जिस से सब सभा सद लोग सिवाय द्रौपदी और विदुर के क्षण भरको अचेत हो जाते हैं और फिर एक दैवी तेज फैलता है और आकाश वाणी होती है)

आकाश वाणी।

हे पाञ्चाली! हे कृष्णा! तूने जो इस समय हमैं अपने सद्भाव से स्मरण किया है इससे हम आय तेरी सहायता को आपहुंचे तू मत घबड़ा हम तेरी लज्जा रक्खेंगे॥

दोहा—जो भक्ती मेरी करै, सब कारज सर जांहि॥
शरण गहे की लाज मोहिं, तू न कलप मन मांहि॥

(इसके उपरान्त सब सभासद लोग फिर चेतन हो जाते हैं और दुःशासन द्रौपदी की साड़ी को खैंचता है और जैसे जैसे वह खैंचता है श्वेत पीले नाना प्रकार के वस्त्र उसके शरीर पर से उतरते हैं यहांतक कि, कपड़ों का एक ढेर लग जाता है और दुःशासन अन्त में थककर बैठ जाता है और सभा में महान् कलकल होता है)

सबराजा०—धिक्कार है धिक्कार है तुझको हे दुःशासन! (द्रौपदीसे) धन्य है धन्य है पांचाली! तेरे सद्धर्मने तेरी इस समय लज्जा रक्खी॥

द्रौ०—(उच्चस्वरसे श्रीकृष्णजीकी स्तुति करती है)

चौपाई।

कृष्णचन्द्र मैं तव बलिहारी। जयगोपाल गोवर्द्धन धारी॥
जय मुकुन्द माधव घनश्यामा। कमल नैन शोभा शतकामा॥
पीताम्बर धर धरणी पालक। जय वसुदेव देवकी बालक॥
जय तवकर सरोज यदुराया। कीन्ह्यो जेहिकर मोपर दाया॥
जय मधुसूदन यदुपति स्वामी। जय त्रिलोकपति अन्तर्य्यामी॥
जय मम लज्जा राखन हारे। जयति यशोदा नन्ददुलारे॥

भीम—(खड़ा होकर क्रोधसे)॥

जयकरी छंद।

बसत लोकमें क्षत्री जौन। सुनै बचन ये मेरे तौन॥